अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-37, अंक-22, 1-15 जुलाई, 2014

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-37, अंक-22, 1-15 जुलाई, 2014

संपादक
बिमल कुमार
मो. : 9235772595

अतिथि संपादक
अशोक मोती
मो. : 7488387174

प्रसार व्यवस्थापक
उमेश कुमार

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
E-mail : sarvodayajagat@gmail.com
Web : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	पांच रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
आजीवन शुल्क	:	1000 रुपये

विज्ञापन दर

पूरा पृष्ठ	:	2000 रुपये
आधा पृष्ठ	:	1000 रुपये
चौथाई पृष्ठ	:	500 रुपये

इस अंक में...

1. नैष्ठिक ब्रह्मचर्य अपनायें... 2
2. संतति नियंत्रण में संतों एवं... 3
3. समाज में संयम का वातावरण... 4
4. आबादी वृद्धि, नियंत्रण और... 5
5. स्त्री को बराबरी का दर्जा... 8
6. प्रार्थना यानी सर्वत्र हरि-दर्शन... 10
7. पर्यावरण पर सबसे बड़ा खतरा... 12
8. खेती की लागत कम करने... 14
9. श्वास की आयुर्वेदिक अनुभूत... 15
10. नदी सूखने से रोजी पर... 17
11. हम वैकल्पिक समाज-रचना के... 18
12. भ्रूण-हत्या... 19
13. अघोषित उलगुलान... 20

नैष्ठिक ब्रह्मचर्य अपनायें : गांधी

आज एक नयी बात आप लोगों से कहना चाहता हूं। सोचा था, विनोबा सुनायें। पर अब समय है, तो मैं स्वयं कह देता हूं। मेरा स्वभाव ही ऐसा है कि अच्छी बात सबके साथ बांट लेता हूं। बात का आरम्भ तो बहुत वर्षों पुराना है। मैं जुलू-युद्ध में गया था (सन् 1906)। उस वक्त की बात है और बड़ी बुलंद बात है। देखो, ईश्वर का खेल इसी तरह चलता है, मेरा निश्चय हो गया कि जिसको जगत् की सेवा करनी है, उसके लिए ब्रह्मचर्य पालन करना आवश्यक है। विवाहित दम्पति को भी ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। इससे मेरा मतलब यह था कि इन्हें प्रजोत्पादक क्रिया में नहीं पड़ना चाहिए। मैं समझता था कि जो प्रजोत्पादक करते हैं, वे ब्रह्मचारी नहीं हो सकते। प्रजोत्पादन और ब्रह्मचर्य, एक-दूसरे के विरोधी हैं—ऐसा मेरा खयाल रहा।

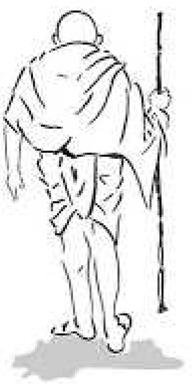

पर गुरुवार को विनोबा मेरे पास एक उलझन लेकर आये। शास्त्र-वचन है, जिसकी कीमत मैं पहले नहीं जानता था, उस वचन ने मेरे दिल में एक नया प्रकाश डाल दिया। उसका विचार करते-करते मैं बिलकुल थक गया, उसमें तन्मय हो गया हूं। अब भी मैं उसी से भरा हूं।

'ब्रह्मचर्य' का जो अर्थ शास्त्रों में बताया है, वह अति शुद्ध है। नैष्ठिक ब्रह्मचारी वह है, जिसने जन्म से ही ब्रह्मचर्य का पालन किया हो। स्वप्न में भी जिसका वीर्य-स्खलन न हुआ हो। लेकिन मैं नहीं जानता था कि प्रजोत्पत्ति के हेतु जो संभोग करता है, उसे नैष्ठिक ब्रह्मचारी क्यों माना गया है? कल वह बुलंद बात मेरी समझ में आ गयी।

जो दम्पति गृहस्थाश्रम में रहते हुए केवल प्रजोत्पत्ति के हेतु ही परस्पर संयोग और एकांत करते हैं, वे ठीक 'ब्रह्मचारी' ही हैं। *आज हम जिसे 'विवाह' कहते हैं, वह विवाह नहीं, उसका आडम्बर है। जिसे हम 'भोग' कहते हैं, वह भ्रष्टाचार है। यद्यपि मैं कहता था कि प्रजोत्पत्ति के लिए विवाह है, फिर भी मैं यह मानता था कि इसका मतलब सिर्फ यही है कि दोनों को प्रजोत्पत्ति से डर मालूम न हो, उसके परिणाम को टालने का प्रयत्न न हो और भोग में दोनों की सहमति हो। मैं नहीं जानता था कि उसका इससे भी अधिक कोई मतलब होगा। पर यह भी शुद्ध विवाह नहीं है। शुद्ध विवाह में तो केवल ब्रह्मचर्य ही है।*

शुद्ध विवाह कब कहा जाय? दम्पत्ति प्रजोत्पत्ति तभी करे, जब जरूरत हो और उसकी जरूरत हो, तभी एकान्त करे। अर्थात् संभोग प्रजोत्पादन को कर्तव्य समझकर तथा उसके लिए ही हो। इसके अतिरिक्त पति-पत्नी कभी एकांत न करें। एकांतवास भी न करें। यदि कोई पुरुष इस प्रकार हेतुपूर्वक संभोग को छोड़कर स्थिरवीर्य हो, तो वह 'नैष्ठिक ब्रह्मचर्य' के बराबर है। सोचिये, ऐसा एकांतवास जीवन में कितनी बार हो सकता है? वीर्यवान् नीरोग स्त्री-पुरुषों के लिए तो जीवन में एक ही बार ऐसा अवसर हो सकता है। ऐसे व्यक्ति नैष्ठिक ब्रह्मचारी के समान क्यों न माने जायँ? जो बात मैं पहले थोड़ी-थोड़ी समझता था वह सूर्य की तरह स्पष्ट हो गयी है। जो विवाहि हैं, वे इसे ध्यान में रखें। पहले भी मैंने यह बात बतायी थी। पर उस समय मेरी इतनी श्रद्धा नहीं थी। उसे मैं अव्यावहारिक समझता था। आज व्यावहारिक समझता हूं। पशु-जीवन में दूसरी बात हो सकती है लेकिन मुनष्य के विवाहित जीवन का यह नियम होना चाहिए कि कोई भी पति-पत्नी बिना आवश्यकता के प्रजोत्पत्ति न करें और बिना प्रजोत्पादन के हेतु से संभोग न करें। ❑

संपादकीय

संतति नियंत्रण में संतों एवं महापुरुषों की सदा सहमति

इसमें शक नहीं कि आबादी-वृद्धि की समस्या आज हमारे सामने सबसे बड़ी चुनौती है। सही मायने में यह समस्या अब मानव जीवन के अस्तित्व से जुड़ गयी है और समय से यदि आबादी-वृद्धि की गति रोकी न गयी तो इसके परिणाम भयंकर हो सकते हैं।

भारत विश्व का पहला देश है जिसने परिवार नियोजन को एक राष्ट्रीय नीति के रूप में अपनाया और जहां परिवार नियोजन को राष्ट्रीय विकास योजनाओं का एक अभिन्न अंग माना गया।

सितंबर, 1984 में मैक्सिको में हुए विश्व-जनसंख्या सम्मेलन में 'साक्षरता' तथा 'समृद्धि' को आबादी नियंत्रण का एक प्रमुख औजार स्वीकार किया गया क्योंकि विश्व के जनांकीकिय आंकड़े बताते हैं कि जिन मुल्कों में साक्षरता और समृद्धि है वहां बच्चे कम पैदा हो रहे हैं। भारतीय राज्यों में भी इस हिसाब से बड़ा फर्क देखने को मिला है। जब हम केरल जैसे कुछ राज्यों की तुलना हिन्दी भाषी राज्यों यथा उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश और राजस्थान ऐसे प्रदेशों से करते हैं तो पाते हैं कि देश की पूरी जनसंख्या में 40 प्रतिशत आबादी का योगदान ये चार राज्य ही कर रहे हैं और यहां जन्म दर और मृत्यु दर भी राष्ट्रीय औसत दर से ऊपर है जो हमारे देश के लिए एक गंभीर चिन्ता का विषय बना हुआ है। आबादी के हिसाब से चीन के बाद भारत विश्व का सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश है। चीन ने तो अपनी आबादी पर कानून एवं राजनीतिक प्रतिबद्धता के आधार पर बहुत हद तक अंकुश लगाने में सफल है किन्तु भारत में जिस तरह आबादी बढ़रही है हम जल्द ही चीन को पीछे छोड़ सकते हैं।

स्वाभाविक है कि भारत में भी पिछले कई दशकों से आबादी वद्धि की समस्या पर गहरी चिन्ताएं व्यक्त की जाती रही हैं। सन् 2000 में पहली बार देश के लिए 'राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000' की घोषणा हुई। राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग एवं राज्य जनसंख्या आयोगों के गठन हुए। उनकी घोषणानुसार सन् 2045 तक आबादी को स्थिर करने की उम्मीद जतायी गयी तथा स्थिर विकास के लिए आबादी स्थिरीकरण को अनिवार्य माना गया है। बावजूद इसके सतत आर्थिक वृद्धि, सामाजिक विकास और पर्यावरणिक संरक्षण की दिशा में जो हमारी प्रगति है और जिस तरह की राजनीतिक प्रतिबद्धता आबादी-नियंत्रण के प्रति देश में प्रकट होती रही है उससे 2045 तक स्थिर जनसंख्या हासिल करने का लक्ष्य भी दुरुह लग रहा है। लगता है परिवार कल्याण कार्यक्रम के कार्यान्वयन के निर्णय को तो हमने स्वीकृति प्रदान की है लेकिन उनके कार्यान्वयन का भार सिर्फ सरकारी विभाग पर छोड़ दिया है।

ऐसा तो हर युग में होता आया है जब सामाजिक नियंत्रणकर्ताओं ने समाज के अस्तित्व को कायम रखने के लिए तत्कालीन आर्थिक परिप्रेक्ष्य में जनसंख्या को मर्यादित करने की हर कोशिश की है। विभिन्न धर्मशास्त्रियों, समाजशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों, संतों और महापुरुषों ने व्यक्ति के गुणात्मक मूल्यों को ऊंचा उठाने तथा लोकतंत्र के अस्तित्व को सुनिश्चित करने के लिए जनसंख्या वृद्धि को मर्यादित करने पर जोर दिया है, सभी धर्मशास्त्रों ने एक स्वस्थ संतान की ही कामना की है न कि अस्वस्थ संतान की।

आखिर कोई भी धर्मशास्त्र भला कैसे व्यक्ति को भूख, निर्वस्त्र एवं दुखी रहने की शिक्षा देगा? अत्यधिक संतान विनाश का कारण भी बनती है जो हमें महाभारत से सीख मिलती है। महाभारत में विनाश का कारण मूलतः जनाधिक्य ही था। ईसाई धर्म और इस्लाम में भी कहीं परिवार सीमित करने का विरोध नहीं है। हजरत मुहम्मद साहब ने तो चेतावनी दी थी—'अधिक संख्या में लोग भीख मांगने लगें तो राष्ट्र का पतन होता है।' इस्लाम का तो मूल मकसद ही है एक ऐसा समाज बनाना जिसमें हर व्यक्ति को हर प्रकार से उन्नति करने का मौका मिले। हर व्यक्ति को लोक-परलोक सुधारने की पूरी-पूरी सुविधा प्राप्त हो।

प्लेटो, अरस्तु, हेमिल्टन जैसे दार्शनिक से लेकर संत सुकरात, गांधी, विनोबा एवं जयप्रकाश सबों ने आबादी-नियंत्रण की ही शिक्षा दी। हालांकि सभी महापुरुषों ने आबादी नियंत्रण के लिए संयम पर ही अधिक बल दिया। संत सुकरात का स्त्री-सहवास के लिए बहुचर्चित मत 'जीवन में सिर्फ एक बार और वह भी केवल शारीरिक सुख के लिए नहीं बल्कि वंश चलाने के लिए', जनसंख्या नियंत्रण की ओर ही इंगित किया है। गांधी और संत विनोबा ने भी संयम पर ही बल दिया है। विनोबा पदयात्रा के दौरान लोगों को कहते थे कि मर्यादा पुरुषोत्तम राम का उन्हें अनुकरण करना चाहिए। क्योंकि उन्हें सिर्फ दो ही संतान थी। जयप्रकाशजी ने स्वयं ब्रह्मचर्य का पालन किया था फिर भी उन्होंने मनुष्य के विकास के लिए आबादी नियंत्रण में अपनी पूरी सहमति व्यक्त की थी।

इस तरह परिवार नियोजन की महत्ता पर पुराने समय से ही लोग कुछ-न-कुछ अवश्य सोचते रहे हैं। बढ़ती आबादी के कारण देश में जो सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियां पैदा हो रही हैं उनके कारण कोई भी व्यक्ति चाहे वह किसी भी जाति या धर्म का अनुयायी क्यों न हो अपने परिवार को सीमित रखने की आवश्यकता और उसके महत्त्व को नकार नहीं सकता।

लेकिन परिवार नियोजन एवं उसके प्रयास तभी सार्थक होंगे जब देश एवं प्रदेश में गांधी, विनोबा, लोहिया एवं जेपी के अंतिम व्यक्ति अपने दरवाजे पर इस कल्याणकारी कार्यक्रम का पदचाप सुनेगा, उनके जीवन बदल जायेंगे, बदलाव के लिए सबसे अधिक जरूरी होगा राजनैतिक प्रतिबद्धता, जन-जन से संवाद एवं कार्यक्रम की योजना बनाने से लेकर उसके कार्यान्वयन पर समुदाय का मालिकाना हक व सहभागिता।

—अशोक मोती

समाज में संयम का वातावरण पैदा करें

❑ विनोबा

इस दुनिया में परमेश्वर है। सारा इन्तजाम उसके हाथ में है। संसार की चिन्ता उसे है। जब वह चाहेगा कि एक हद के बाद सन्तान ज्यादा न बढ़े, तो वह आपको संयम की बुद्धि देगा। समाज में हम संयम का वातावरण निर्माण करें। लोगों को पुरुषार्थ सिखायें। अकसर ऐसा होता है कि जिन प्राणियों में पराक्रम और पुरुषार्थ की प्रेरणा कम होती है, उनकी औलाद बढ़ती है। शेर की संतान कम और बकरी की ज्यादा होती है। अतएव संयमानुकूल वातावरण बढ़े और बने। संयम की तरफ ध्यान न देते हुए अगर माता-पिता भोगवासना में लिप्त रहे, तो उनके बच्चे बुद्धि से इतने नालायक बनेंगे कि वे किसी प्रकार का पराक्रम और पुरुषार्थ नहीं कर सकेंगे। उनके जीवन में तेजस्विता नहीं रहेगी। इसलिए कृत्रिम साधनों से परिवार-नियोजन की योजना खतरनाक है; अपने देश के लिए ही नहीं, मानवमात्र के लिए।

संयम की तरफ ध्यान न देते हुए अगर माता-पिता भोगवासना में लिप्त रहे, तो उनके बच्चे बुद्धि से इतने नालायक बनेंगे कि वे किसी प्रकार का पराक्रम और पुरुषार्थ नहीं कर सकेंगे।

मैं जानता हूं कि बड़े-बड़े लोग इन कृत्रिम साधनों के अनुकूल हैं। अच्छे-अच्छे विचारक इसके पक्ष में हैं। फिर भी इस विषय में काफी मतभेद है और यह एक चर्चा का विषय हो सकता है। इसकी छानबीन होनी चाहिए। इसके कई पहलू हैं। इसके आध्यात्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और शैक्षणिक पहलू हैं। इतने विविध पहलू हैं। यह चीज ही ऐसी है कि बिलकुल जीवन के केन्द्र में खड़ी है। इसलिए यों ही सहज भाव से कह देना कि, 'हाँ भाई, जनसंख्या बढ़ रही है, तो करो नियमन',—यह मुझे जँचता नहीं, और उसके साथ मेरे विचारों का मेल बैठता नहीं। वैसे मैं उसे छोड़ सकता था, क्योंकि मैं ऐक्य पर जोर देना चाहता हूं। लेकिन मुझे यह चीज बुनियादी लगती है। कुछ चिल्लर (फुटकर) मतभेद होते हैं, वैसा मतभेद यह नहीं। कृत्रिम साधनों से परिवार-नियेजन करने में मैं अपने देश का कल्याण नहीं देखता, बल्कि इसमें आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों की हार है, ऐसा मैं मानता हूं। फिर भी मैं चिनतन के लिए मुक्त हूं। अगर कोई समझाने के लिए आता है, तो मैं शून्य चित्त से समझने के लिए तैयार हूँ, और आशा करूंगा कि सामने वाला भी मेरा विचार सुनने के लिए तैयार होगा।

गांधीजी ने भी विचार बदला

पुरानी बात है। एक बार गांधीजी ने संतति-नियमन के बारे में किसी से चर्चा की थी और संगीत-पद्धति को, 'रिद्म सिस्टम' (Rhythm System) को, 'सेफ पीरियड' (Safe period) को उन्होंने शायद सम्मति दी थी। यह अखबार में आया तो मैंने पढ़ा। मुझे वह जँचा नहीं, तो गांधी सेवा संघ के सावली के सम्मेलन में मैं उनसे मिला और वहां इस विषय पर सवा-डेढ़ घंटा हमारी बातचीत हुई। उनके सामने मैंने अपनी बात रखी कि स्त्री-पुरुष का संगम केवल संतानोत्पत्ति के हेतु ही होना चाहिए और एक दफा के संगम में एक सन्तान पैदा होनी चाहिए। यह शास्त्रीय विषय है। चर्चा के बाद उन्होंने कहा कि तुमने जो कहा वह सही है, शास्त्रीय विषय है। मैंने जो अनुमति दी थी, वह गलत था। उन्होंने मुझे कहा कि ''तुम इसे आज की सभा में रखो।'' मैंने कहा, ''मैंने नहीं रखूंगा, आपको ही रखना पड़ेगा।'' उन्होंने उस दिन अपने भाषण में वह विचार रखा। एक तुच्छ मनुष्य के मुंह से निकला विचार ग्रहण करने के लिए वे तैयार थे। वे सत्यग्राही थे। कहना मैं यह चाहता था कि इस विषय की छानबीन होनी चाहिए। गहराई से चिन्तन किये बिना यों ही इस समस्या के निवारण के लिए योजना करेंगे, तो उसमें बड़ा खतरा है।

संयम ही एक उपाय

संतति नियमन करना चाहते हैं, उसके लिए उपाय कौन-सा है? उपाय वही है, जो महावीर ने बताया था, रोमन कैथोलिक लोगों ने बताया था। यही कि सर्वत्र संयम बढ़े। बाबा ने भी उत्तम उपाय सुझाया है और वह व्यावहारिक है—ऐसी बाबा की कल्पना है।

इसके लिए भारतीय संस्कृति में चार आश्रम बताये हैं। 25 साल तक ब्रह्मचर्याश्रम। ब्रह्मचर्य आदर्श होगा। उतना पूरा न हो सका, तो उसके बाद एक सीढ़ी नीचे—संयमयुक्त गृहस्थाश्रम। चार लड़के हों, तो दो गृहस्थ बनें और दो ब्रह्मचारी रहें। शादी 18 साल से पहले न हो। 15 वर्ष ग्रहस्थाश्रम। 40 वर्ष की उम्र के बाद वानप्रस्थाश्रम। और चौथा आश्रम है, संन्यासाश्रम। हर घर में इस तरह हो, तो प्रत्येक घर में पूर्णता आयेगी। परिवार-नियोजन के लिए मेरा विधायक सुझाव है।

हिन्दू-धर्म का और मानवता का दावा

हमारे पास गांधी तक की परम्परा है। फिर भी मैं हार खाऊं और 'संतति-नियमन के लिए संयम पर मेरी निष्ठा नहीं है,' कहकर यह मार्ग लूं, तो मैं मानता हूं कि मैंने केवल हिन्दू-धर्म का दावा ही नहीं छोड़ दिया, बल्कि मानवता से भी हार गया। इसमें हम मानवता से भी परे हो जाते हैं। मानव का लक्षण संयम रखना है। इस पर आप सोचें, इतना ही मैं कहूंगा।

केवल दो–बस!

गृहस्थाश्रम में भी दो संतानों में तृप्ति माननी चाहिए। माता-पिता दोनों मिलकर दो व्यक्ति हैं, तो दोनों अपने पीछे दो ही व्यक्तियों को छोड़कर जायँ। तीन बच्चे होंगे, तो अपने पीछे डेढ़ गुनी संख्या बढ़ेगी। सादा गणित है। फिर आपको वासना करनी पड़ेगी कि तीन में से एक बच्चा मर जाय, या दो बच्चों में संतोष मानें।

रामजी ने ऐसा ही किया था। माना जाता है कि रामजी आदर्श पति थे, आदर्श भाई→

आमुख

आबादी वृद्धि, नियंत्रण और विकास की चुनौतियां

❑ अशोक मोती

अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा को जितना खतरा अणु, हाइड्रोजन या कोबाल्ट बम से है, उससे कहीं अधिक खतरा जनसंख्या विस्फोट से है, 'बेंजाममिन' के इस कथन में काफी दम है क्योंकि विश्व की जनसंख्या जिस कदर दिनोंदिन बढ़ रही है उससे विश्व-शांति पर खतरे का दबाव काफी बढ़ गया है।

दरअसल आबादी वृद्धि की समस्या विश्व के सामने सबसे बड़ी चुनौती के रूप में खड़ी है। सही मायने में यह समस्या अब मानव जीवन के अस्तित्व से जुड़ गयी है और यदि समय से आबादी वृद्धि की गति और उसके परिणाम को नहीं रोका जा सका तो इसके परिणाम भयंकर हो सकते हैं।

आबादी की दृष्टि से विश्व में चीन के बाद दूसरे स्थान पर भारत है। अमीर और अमीर, गरीब और गरीब हो रहे हैं।

21वीं शताब्दी की पहली जनगणना वर्ष 2001 में हम 102.7 करोड़ थे अब यह संख्या बढ़कर 2011 में 121.42 करोड़ हो गयी। यानी इस सदी के पहले दशक में हम 18.1 करोड़ बढ़े हैं और विश्व की आबादी में हमारा हिस्सा 17.5 प्रतिशत पहुंच गया है जबकि चीन का 19.4 प्रतिशत। परन्तु यह चिन्ताजनक है कि चीन भारत की वृद्धि दर 17.64 प्रतिशत की तुलना में काफी कम है। यानी आजादी के बाद जनसंख्या साढ़े तीन गुणा बढ़ने से देश के विकास करने, गरीबी हटाने के तमाम दावे बेमानी सिद्ध हो गये हैं। और हम एक गरीब लोकतांत्रिक देश के रूप में ही पहचाने जाते हैं। सरकार भी 37 प्रतिशत लोगों को गरीबी रेखा के नीचे मानती है जबकि गैर-सरकारी आँकड़े लगभग 70 प्रतिशत, जिनकी प्रति व्यक्ति दैनिक आय 20 रुपये से भी कम है। देश में साक्षरता 74 प्रतिशत होने के बावजूद आज लगभग 30 करोड़ लोग तो निरक्षर हैं। बुर्जुगों की दशा खराब हुई है। युवाओं में रोजगार का अभाव है। उद्योग बढ़ने से पर्यावरण खतरनाक स्थिति में है, नदियां तक प्रदूषित हैं। शहर से अधिक झुग्गी-झोपड़ियां बढ़ी हैं। भारत में जनसंख्या वृद्धि में कमी आ रही है परन्तु कुल जनसंख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है क्योंकि कुल जनसंख्या का 51 प्रतिशत भाग प्रजननआयु वर्ग (15-49) का है। वर्ष 2016 तक इस जनसंख्या में 1610 लाख वृद्धि भी शामिल हो जायेगी।

'वर्तमान परिस्थिति में यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि अगर जनसंख्या मर्यादित नहीं किया गया तो आर्थिक विकास के सभी प्रयास विफल होते जायेंगे। इसलिए 'विकास नियोजन' के साथ-साथ 'जनसंख्या नियोजन' जो 'परिवार नियोजन' द्वारा ही संभव है, होना ही चाहिए।'

–जयप्रकाश नारायण

भूमि : विश्व की समस्त भूमि में से सिर्फ 2.4 प्रतिशत भाग ही भारत के पास है जबकि विश्व की 16.7 प्रतिशत आबादी भारत में रहती है।

जनसंख्या के इस दबाव के कारण कृषि के लिए भूमि कम उपलब्ध होगी जिससे खाद्यान्न, पेयजल की उपलब्धता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। इसके अतिरिक्त लाखों लोग स्वास्थ्य एवं शिक्षा के लाभों एवं समाज के उत्पादक सदस्य होने के अवसर से भी वंचित हो जायेंगे।

आधे विलियन से अधिक भारतीय 25 वर्ष से कम आयु के हैं। यह और भी खतरनाक है कि हमारी जनसंख्या का लगभग

→थे, आदर्श पुत्र थे, आदर्श स्वामी थे, आदर्श सेवक थे। उन्होंने सारा आदर्श पेश किया। '**मर्यादा पुरुषोत्तमः**'। चौदह साल जंगल में रहे, तब ब्रह्मचर्य का पालन किया। ऋषियों के समान रहे। सीताजी ने भी ब्रह्मचर्य का पालन किया। फिर जब वापस आये, राज्याभिषेक हुआ, तब दो बच्चे हुए और मामला समाप्त कर दिया।

इसलिए दो संतानों में तृप्ति माननी चाहिए। फिर उन संतानों को परमेश्वर की मूर्ति समझकर, उनके पालन-पोषण तथा शिक्षण की ओर ध्यान देना अपना कर्तव्य समझेंगे, तो वासना पर अंकुश आयेगा। वासना पर अंकुश लाना होगा। यह जरूरी नहीं कि पति-पत्नी इकट्ठे सोयें। बम्बई जैसे शहरों में जगह कम रहती है, इसलिए नजदीक सोना पड़ता होगा। लेकिन एक ही बिछौने पर सोयें, यह जरूरी नहीं। बच्चों को साथ लेकर सोयें, तो संयम में मदद मिलेगी। बच्चों की उपस्थिति को भगवान् की उपस्थिति समझकर उन्हें अपने और पत्नी के बीच सुलाना चाहिए। इससे प्रेम और संयम बढ़ेगा। ❑

42 प्रतिशत भाग उन बच्चों के कारण बढ़ता है जो प्रति परिवार दो बच्चों के बाद बढ़ता है। जिन राज्यों में वृद्धि दर अधिक है वहां मातृ-मृत्यु दर और शिशु मृत्यु दर भी अधिक है। बार-बार जन्म देने से माँ और बच्चे दोनों स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है, जो पूरे समाज के विकास पर भी बुरा असर डालता है। यह आश्चर्य-जनक है कि हमारे कई राज्य तो कई देश के बराबर हैं। और हमारे संसाधन भी उन देशों से कम हैं।

भारतीय राज्यों की तुलना कुछ राष्ट्रों से तालिका में की गयी है।

अंतर्राष्ट्रीय जनसंख्या विभाग संस्थान द्वारा किये गये अध्ययन से यह पता चलता है कि बिहार, झारखंड, राजस्थान, उत्तर प्रदेश दम्पति सुरक्षा दर 52-62 प्रतिशत ही है। जब तक नवयुवक-युवतियां परिवार नियोजन की विधियां नहीं अपनातीं और बच्चों के जन्म में काफी अंतर नहीं रखतीं तबतक जनसंख्या वृद्धि के कारण देश का विकास पिछड़ता चला जायेगा। स्पष्टतः मनुष्य के बेहतर जीवन स्तर और समाज के विकास का आबादी से गहरा संबंध है।

जब तक हम अबाध गति से बढ़ती हुई जनसंख्या पर नियंत्रण नहीं कर लेते हमें अपने विकास के क्षेत्र में अपेक्षित सफलताएं नहीं मिल सकतीं। हमें सोचना है कि यदि विकासशील देश की श्रेणी में हमें अपने देश को भी लाना है तो विकास के कार्य में गति लाने के साथ ही साथ अनियंत्रित आबादी पर भी अंकुश लगाना होगा।

हमारे देश में आजादी के बाद से विकास के विभिन्न क्षेत्रों में काफी प्रगति हुई। खाद्य पदार्थ के उत्पादन में आज हमारा देश आत्मनिर्भर है फिर भी हमारे देश में प्रति व्यक्ति आय की दर काफी चिन्ताजनक स्थिति में है। उद्योग-धंधे एवं वैज्ञानिक प्रगति के बावजूद हमारा देश विकासशील देशों की श्रेणी में नहीं आ पाया है। देश में बेरोजगारी, महंगाई आदि काफी बड़े तबके के सामने रोटी-कपड़ा और मकान की समस्या बनी हुई है। इसका प्रमुख कारण हमारी आबादी वृद्धि है। बेतहाशा बढ़ती आबादी की आवश्यकताओं की पूर्ति में हमारे साधन काफी कम पड़ जाते हैं। भूमि की उर्वराशक्ति सीमित है हमारे भूखंड सीमित हैं। जमीन को न तो रबर की तरह फैलाया जा सकता है और न ही उसमें एक सीमा से अधिक उर्वरता ही बढ़ायी जा सकती है।

विशाल राष्ट्रों की जनसंख्या की तुलना में भारतीय राज्यों की जनसंख्या

भारतीय राज्य	जनसंख्या (मिलियन में)	जनसंख्या (मिलियन में)	राष्ट्र
उत्तर प्रदेश	*183*	*187*	*ब्राजील*
महाराष्ट्र	*104*	*104*	*मेक्सिको*
बिहार	*90*	*83*	*जर्मनी*
पश्चिम बंगाल	*85*	*85*	*वियतनाम*
आन्ध्र प्रदेश	*80*	*84*	*फिलिपीन्स*
मध्य प्रदेश	*66*	*63*	*थाइलैण्ड*
तमिलनाडु	*65*	*61*	*फ्रांस*
राजस्थान	*62*	*59*	*इटली*
गुजरात	*55*	*47*	*दक्षिण अफ्रीका*
उड़ीसा	*39*	*39*	*अर्जेण्टीना*
केरल	*33*	*32*	*कनाडा*
झारखण्ड	*29*	*29*	*युगांडा*
असम	*29*	*27*	*उजबेकिस्तान*
पंजाब	*26*	*26*	*पेरू*
हरियाणा	*23*	*22*	*रोमानिया*
छत्तीसगढ़	*22*	*22*	*घाना*
दिल्ली	*16*	*14*	*कम्बोडिया*
जम्मू-कश्मीर	*11*	*10*	*बेल्जियम*
उत्तराखंड	*9*	*8*	*ऑस्ट्रिया*

स्रोत : *यूएन पॉपुलेशन, प्रोसपेक्टस, 2006।*

गाँव उजड़ रहे हैं; शहर उग रहे हैं : जैसा कि पूर्व में कहा गया है कि कुल खाद्य सामग्री का 98 प्रतिशत भाग भूमि से मिलता है। अभी विश्व की कुल कृषि योग्य भूमि के 50 प्रतिशत भाग पर अनाज उगाया जाता है। अनाज मनुष्य की खुराक की कुल कैलोरी में 52 प्रतिशत का योगदान देते हैं। अभी विकासशील देशों में यह 62 प्रतिशत है। इसके अलावा, प्रोटीन की खपत का लगभग 50 प्रतिशत यह भाग है। दूसरी तरफ विश्व की जनसंख्या के आठ करोड़ लोग प्रति वर्ष बढ़ जाते हैं। इसी से हम आबादी वृद्धि और विकास के संबंध का अंदाजा लगा सकते हैं।

जनसंख्या के विकास का इतिहास : वास्तव में जनसंख्या और विकास एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। यदि हम दोनों में तालमेल न बिठा पाये तो फिर हमें वन-वन उसी तरह भटकना होगा जैसे कभी हमारे वंशज भटकते रहे थे, लाखों वर्ष। उस समय मनुष्य मात्र को खतरा था, क्योंकि उनकी खाद्य आपूर्ति पर कोई नियंत्रण नहीं था। उनके पास न कपड़े थे और न सर छुपाने के लिए कोई आश्रय। हम आज फिर उसी भयावह स्थिति की ओर जा रहे हैं। जनसंख्या वृद्धि के कारण आज हमारे सामने एक अजीबोगरीब स्थिति पैदा हुई है।

दस हजार से बारह हजार वर्ष पूर्व की गयी कृषि की खोज को पहले मनुष्यों की आबादी वृद्धि बहुत धीमी रही होगी। कृषि और पशु-पालन की खोज के समय विश्व की

जनसंख्या शायद डेढ़ करोड़ के आसपास रही होगी। ईसा के समय तक यह चार बार दो गुनी होती गयी। तब अनुमानतः यह 25 करोड़ थी। ईसा के समय की यह जनसंख्या 1650 वर्षों में दोगुनी यानी पचास करोड़ हो गयी, इसके बाद इसे दुगुना करने में मात्र 200 वर्ष लगे। 1850 में विश्व की जनसंख्या एक अरब हो गयी। यह समय था जब संक्रमण रोगों के कारण अभी रोग निदान से संबंधित खोजें हो रही थीं। जनसंख्या को तीसरी बार दो गुना होने में केवल अस्सी वर्ष और लगे। यह स्तर प्राप्त हुआ सन् 1930 में। इस समय आधुनिक खोज के कारण मृत्यु-दर में आश्चर्यजनक रूप से कमी आयी। 1975 में ही चौथी बार जनसंख्या दो गुनी हो गयी और इस बार यह चार अरब हो गयी। यह सब केवल 45 वर्षों में ही हुआ।

यद्यपि विश्व जनसंख्या की वृद्धि की दर के कुछ कम होने की संभावना है तो भी वर्तमान जनसंख्या दर से भी जनसंख्या सन् 2015 तक दो गुनी होकर 8 अरब हो जायेगी। स्पष्टतः जनसंख्या हमारे विकास की गति से अधिक तीव्रतर रूप में बढ़ रही है।

विश्व की खाद्य, भूख, गरीबी की समस्याओं का कोई स्थायी हल तब तक नहीं होगा जब तक अन्न उत्पादन या विकास एवं जनसंख्या के बीच एक स्थायी संतुलन नहीं बन जाता। विकास की गति तेज करने से सिर्फ हम जनसंख्या रूपी राक्षस से मात्र कुछ समय के लिए ही राहत पा सकते हैं—यह कोई स्थायी हल नहीं है। अब मानव अस्तित्व और जनसंख्या की स्थिति बिलकुल भिन्न है। अतः अब हब्बा के वंशज की 'दूधो नहाओ, फूलो-फलो' वाली उक्ति नहीं चलने की।

पश्चिमी देशों ने तो अपनी संख्या वृद्धि में कमी लाकर अपने को आवश्यकतानुसार ढाल लिया है किन्तु विकासशील देश के लोगों में अभी भी ऐसा कर सकने की दृढ़-इच्छा उजागर नहीं हो रही है। आज विश्व में 'मानव अधिकार' की बात हो रही है किन्तु तीसरे विश्व में अभी भी वे वस्तुएं उपलब्ध नहीं हैं, जो एक अच्छे जीवन के लिए आवश्यक हैं यानी (1) भरपेट भोजन, (2) पर्याप्त कपड़ा, (3) सिर छुपाने को मकान, (4) रोजगार, (5) मूल शिक्षा जिसके द्वारा कोई भी अपनी प्रतिभा का विकास करने योग्य हो सके, (6) बीमार पड़ने पर चिकित्सा सुविधाएं। इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए आज देश के सामने बढ़ती आबादी ही नयी चुनौतियां पेश कर रही हैं। हमारे सामने सबसे बड़ी चुनौती है युवा शक्ति का सही दिशा में इस्तेमाल करना मगर हम इस श्रमशक्ति का इस्तेमाल बेहतर ढंग से कर पाएं तो देश की तरक्की संभव है। अगले 20-30 वर्षों में 60 वर्ष से ज्यादा उम्र के बुजुर्गों की संख्या में बढ़ोतरी को देखते हुए उनकी सामाजिक सुरक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता, स्वास्थ्य आदि सुविधाओं का सुदृढ़ीकरण जरूरी होगा तथा तृणमूल स्तर तक इसे ले जाना होगा। गुणवत्तापूर्ण एवं प्रभावी शिक्षा के बिना लोगों में जागृति पैदा नहीं हो सकती। अतः शिक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ करना भी उतना ही जरूरी होगा। लिंग-भेद के कारण या बेटा-बेटी में भेद के कारण लिंग असमानता की चुनौती भी हमारे सामने है। कन्या भ्रूण हत्या को रोकना हमारी प्रबल प्राथमिकता होनी चाहिए। आबादी वृद्धि का सर्वाधिक दबाव पर्यावरण पर है। पर्यावरण के तमाम घटक जल, जंगल, जमीन व वायु आदि में प्रदूषण इतना बढ़ गया है कि जीवन ही खतरे में पड़ गया है। पीने का शुद्ध जल तक हमारी आधी जनसंख्या को उपलब्ध नहीं है, नदी के जल भी प्रदूषित हैं। पेट्रोल, डीजल आदि की खपत ने वायुमंडल को दूषित कर दिया है, मौसम चक्र बदलने लगा है, तापमान में खासी वृद्धि तथा हिमखंड पिघलने की गति तेज हो गयी है। दरअसल ये सारी चुनौतियां हमने खुद पैदा की हैं, जिनसे निजात बहुत जरूरी है जो आबादी नियंत्रण से ही संभव है।

तीसरे विश्व में जब तक इन मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा नहीं किया जाता तब तक मानव अधिकार एवं अभिव्यक्ति आदि की बातें अर्थहीन और खोखले शब्द ही रहेंगे जो मुख्य प्रश्न को धुंधला कर देंगे।

किसी भी देश के लिए, विशेष रूप से जहां जनसंख्या वृद्धि बहुत अधिक है मूल आवश्यकताओं को सुलभ करवाना एक जटिल काम है। इनके लिए आवश्यक है कि लोग सिर्फ सरकार पर ही निर्भर न रहें। बल्कि सरकार के साथ ही निजी और सहकारी क्षेत्र इकाइयों को भी चाहिए कि वे आवश्यक स्रोत आधार को विकसित करें, विकास-कार्य से तालमेल बिठाकर आबादी वृद्धि पर अंकुश लगायें। आबादी वृद्धि और विकास में यदि हम तारतम्य नहीं बिठा पाये तो हमारे देश में सामाजिक एवं राजनीतिक अशांति का सदैव खतरा बना रहेगा।

इसमें कोई शक नहीं कि सरकार द्वारा विकास की गति में काफी तेजी लायी गयी है। किन्तु हमें जिस रूप में अपनी आबादी वृद्धि को रोकने के लिए आगे आना चाहिए, नहीं आ रहे हैं। परिवार नियोजन कार्यक्रम को अभी भी जन आंदोलन बनाने की आवश्यकता है जो आमलोगों के सक्रिय सहयोग से ही संभव है। परिवार नियोजन ही हमारे सुख का आधार हो सकता है। आबादी वृद्धि पर अंकुशल लगाने के लिए आवश्यक है कि लोग शादी करने की उम्र में बढ़ोतरी करें, दो बच्चों के जन्म में काफी अंतर रखें तथा एक या दो बच्चे के बाद स्थायी तौर पर बच्चा न होने देने के उपाय करें। ऐसा करके ही हम विकास तथा आबादी वृद्धि में तालमेल बिठाकर देश, समाज तथा परिवार को खुशहाल बना सकते हैं। इसके लिए जनचेतना के साथ-साथ राजनीतिक प्रतिबद्धता भी बहुत आवश्यक है।

लोकनायक जयप्रकाश ने सही कहा है—''वर्तमान परिस्थिति में यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि अगर जनसंख्या मर्यादित नहीं किया गया तो आर्थिक विकास के सभी प्रयास विफल होते जायेंगे। इसलिए 'विकास नियोजन' के साथ-साथ 'जनसंख्या नियोजन' जो 'परिवार नियोजन' द्वारा ही संभव है, होना ही चाहिए।''

आइए, भविष्य की सोचें, आबादी वृद्धि रोकें। ❑

स्त्री को बराबरी का दर्जा किसने दिया?

❑ दादा धर्माधिकारी

दुनिया भर में आज क्रांति का वातावरण है। क्रांति की प्रक्रिया में क्या स्त्री के लिए कोई भूमिका है? यह सवाल आज ही नहीं मार्क्स के जमाने में भी उठा। मार्क्स और एंजल्स ने, जो साम्यवादी घोषणा पत्र (कम्युनिष्ट मेनिफेस्टो) निकाला, उसमें पहली चीज आयी, सम्पत्ति का समाजीकरण हो। इस संदर्भ में मार्क्स से एक प्रश्न पूछा गया, सम्पत्ति का समाजीकरण होगा तो क्या स्त्री का भी समाजीकरण होगा? मार्क्स ने प्रश्न करने वालों को फटकारा और कहा कि जिनका समाजीकरण हो रहा है, वे वस्तुएं हैं, व्यक्ति नहीं। वस्तु का ही समाजीकरण होगा, व्यक्ति का नहीं। स्त्री वस्तु नहीं, व्यक्ति है उसका समाजीकरण नहीं हो सकता। जब स्त्री का समाजीकरण नहीं हो सकता तो समाज को बदलने में उसकी क्या भूमिका होगी? मार्क्स और एंजल्स इसका सही-सही उत्तर नहीं दे सके। आगे-आगे पुरुष, पीछे-पीछे स्त्री। पुरुषों के साथ वह होगी, इतना उन्होंने कहा।

रूस की क्रांति में लड़के-लड़कियां साथ थीं, लेकिन क्रांति किसकी थी? लड़कों की। चीन में क्रांति हुई। इन दोनों क्रांतियों में स्त्री की भूमिका गौण रही। आज हर जगह, हर देश में क्रांति का उद्घोष हो रहा है। लेकिन सभी क्रांतिकारियों ने यह घोषित कर दिया है कि बूढ़े-बच्चे और स्त्रियां हमारी क्रांति के काम के नहीं हैं। क्यों काम के नहीं हैं?

वास्तव में स्त्री की भूमिका क्या है? वह बूढ़े और बीमारों के बीच ही अपने को सुरक्षित समझती हैं। स्त्री की इसी मनोवृत्ति के कारण आज का तरुण सोचता है कि क्रांति की प्रक्रिया में स्त्री का सक्रिय हिस्सा हो ही नहीं सकता।

इस संदर्भ में गांधी की क्या भूमिका थी? आजादी की लड़ाई में गांधी ने स्त्री को बराबरी की भूमिका दे दी थी। स्त्री के लिए वह सुयोग था। स्त्री और पुरुष दोनों को समान स्तर पर, समान धरातल पर लाने के लिए क्या क्रांति की प्रक्रिया में ही कोई परिवर्तन हो सकता है? गांधी ने कहा, हो सकता है। मनुष्य में एक शक्ति छिपी है—दिल और दिमाग की शक्ति जिसमें कोई वजह नहीं कि स्त्री पुरुष के पीछे रह जाये। क्रांति करने में आज तक सत्ता बल का और शासन बाल का प्रयोग होता रहा। गांधी ने कहा इससे श्रेष्ठ एक तीसरा बल है, दिल और दिमाग का बल। वह आजमाया जाय तो स्त्री और पुरुष वास्तविक समान धरातल पर आ सकते हैं। जैसे किसी पुरुष का जीवन असीम हो सकता है वैसे ही स्त्री का जीवन भी असीम हो सकता है, क्षितिज व्यापी हो सकता है। जहां आकाश और पृथ्वी एक दूसरे को चूमते हैं, वहां तक उसके जीवन का विकास हो सकता है।

संस्कृति की ओर बढ़ें : अब क्या एक स्त्री और एक पुरुष हर हालत में निर्भयता से एक दूसरे के साथ रह सकते हैं? गांधी ने अपनी सारी पवित्रता की बाजी लगाकर इस संबंध में प्रयोग किये और कुछ हद तक इसका जवाब भी दे दिया। अब इसके आगे स्वयं स्त्रियों को इसका हल ढूंढ़ना है।

समस्या जिनके जीवन में है, उन्हीं को जवाब खोजने होते हैं। इसमें एक बात यह समझने में की है कि समस्या पुरुष के विरुद्ध स्त्री की नहीं है। पुरुष का एक और स्त्री का दूसरा हित, और समाज में ये दो स्वार्थ एक दूसरे के विरुद्ध हैं, ऐसा आज जो दिखायी देता है वह परिस्थिति जन्य है, सांस्कृति नहीं है। सांस्कृतिक से मेरा मतलब है, ऐसी परिस्थिति जो स्त्री पुरुषों के एक दूसरे के साथ रहने के लिए आवश्यक है। स्त्री और पुरुष दोनों एक दूसरे के साथ रह सकें, स्वतंत्रता के साथ रह सकें, निर्भयता के साथ रह सकें—यह संस्कृति है। इस संस्कृति की तरफ हमको कदम बढ़ाना है।

मनुष्य का मनुष्य के साथ संबंध ही जीवन है और वही सह-संबंध समाज है। समाज और कोई चीज नहीं है। समाज को आज हमने एक काल्पनिक वस्तु मान लिया है। मनुष्यों के जोड़ का नाम समाज नहीं है। अलग-अलग स्वार्थों के जोड़ का नाम भी समाजहित नहीं है। हर व्यक्ति अपना अपना स्वार्थ देखता है तो सबका मिलकर समाज का स्वार्थ सिद्ध हो गया—यह भ्रामक कल्पना है, मिथ्या कल्पना है। हरेक व्यक्ति दूसरे का स्वार्थ देखेगा और हर व्यक्ति सबका स्वार्थ देखेगा, इसे संबंध कहते हैं। मैं आपके स्वार्थ का विचार करूं और आप मेरे स्वार्थ का विचार करें—यह सामाजिकता है। सामाजिक पृष्ठभूमि में ही स्त्री और पुरुष की पारस्परिकता का विचार हो सकता है। यह विचार करते समय हम यह समझ सकते हैं कि स्त्री की अंतिम कमजोरी कहां है? इसकी दुर्बलता का कारण क्या है? आधार कहां है? औरतों के सारे दोषों को छोड़ दीजिए, ऊपर की परम्परा से आये हुए दोष हैं, परम्परा के कारण कुछ संस्कार स्त्रियों के चित्त में पैदा हो गये हैं, उसके कारण ये दोष आ गये हैं। मेरी वेस्टन काफर ने अपनी एक पुस्तक में मजे की चीज लिखी है—कुत्ते के कान खड़े होते हैं। एक स्त्री की ऐसी इच्छा हुई कि कुत्तों के कान खड़े न हों, गिरे हों तो कुते ज्यादा खूबसूरत दिखायी देंगे। यह कैसे किया जाय? उसने एक कुत्ते को और कुत्ती को शेर के

तुम लड़की हो

तुम बहुत अच्छी तरह याद रखना।
तुम जब घर की दहलीज
पार करोगी,
लोग तुम्हें तिरछी निगाहों से देखेंगे।
तुम जब गली से होकर चलोगी,
तो लोग तुम्हारा पीछा करेंगे।
तुम जब गली पार कर,
मुख्य सड़क पर पहुंचोगी,
लोक तुम्हें चरित्रहीन कहकर
गाली देंगे।
अगर तुम निर्जीव हो तो,
तुम पीछे लौटोगी।
वरना जैसे चलती जा रही,
चलती जाना।

–तस्लीमा नसरीन, बांग्लादेश

सामने बांधना शुरू किया जिससे उन कुत्तों के कान गिरे हुए रहते थे। जब उनकी औलाद हुई तो वह गिरे हुए कानों वाली हुई, इसे संस्कार कहते हैं। जिसे आप मनुष्य का स्वभाव कहते हैं, उसमें कुछ प्रकृति है, संस्कृति है, संस्कार है। अच्छे संस्कार और बुरे संस्कार। मनुष्य केवल प्राकृतिक नहीं है, इस बात को समझ लेना बहुत आवश्यक है। जब मैं यह कहता हूं कि मनुष्य प्राकृतिक नहीं है तो पुरुष और स्त्री दोनों प्राकृतिक नहीं हैं। प्राकृतिक जीवन मनुष्य का हो ही नहीं सकता, होना भी नहीं चाहिए। इसलिए अन्य प्राणियों के उदाहरण पूर्ण रूप से मनुष्य के लिए लागू नहीं हैं। दूसरे प्राणियों के दृष्टांत एक हद तक, एक मर्यादा तक मनुष्य के जीवन के लिए लागू हैं, उससे आगे नहीं। मनुष्य सांस्कृतिक जीव है। संस्कारों का बना हुआ। पुरुष भी कुछ संस्कारों का बना है और स्त्री भी कुछ संस्कारों की बनी हुई है।

संस्कारों की अपनी विशेषताएं हैं, अपनी सीमाएं हैं, अपनी रेखाएं हैं। यह संस्कार ही हैं, जिससे हमारे समाज में दुर्बल पुरुष भी प्रतिष्ठा और सम्मान के साथ रहता है। आप यह देखते हैं कि मनुष्यों में तगड़ा पुरुष नेता नहीं होता। जिसमें शारीरिक शक्ति अधिक है, वह कोई नेता नहीं होता। पठानों के नेता बादशाह खां हैं। बूढ़ा कमजोर बीमार आदमी पठानों का नेता! होना चाहिए था कोई कींगकांग जैसा तगड़ा पठान। यह तो नहीं हुआ। यह गांधी, विनोबा मनुष्यों के नेता रहे हैं। जिनके शरीर में बहुत शक्ति नहीं है, वे मनुष्यों के नेता हैं। इससे एक सिद्धांत, सामाजिक सिद्धांत निष्पन्न होता है कि मनुष्य की शक्ति इसके शरीर में नहीं है, और कहीं है। गांधी पर अत्याचार हुआ उनको पीटा गया, मारा गया। बादशाह खां पर भी अत्याचार हो सकता है। लेकिन गांधी और बादशाह खां दोनों अत्याचारों के कारण अपमानित नहीं हुए! समाज में उनकी प्रतिष्ठा कम नहीं हुई। अत्याचार तो हुए उन दोनों पर। और गांधी को तो मार ही डाला गया। लेकिन इसके कारण उनके सम्मान को आँच नहीं आयी। इस पर गहराई से विचार करते समय किसी को यह समझने में कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि मानव-समाज में दुर्बल होने मात्र से कोई अनादर का पात्र नहीं होता।

स्त्री की समस्या–पुरुष? : तब स्त्री की दुर्बलता उसे क्यों घेरे रहती है? क्या पुरुष दुर्बलता और उसकी दुर्बलता में कोई अंतर है? यहां आप शारीरिक दुर्बलता का अंतर स्वीकार कर सकते हैं। पुरुष की शारीरिक दुर्बलता और स्त्री की शारीरिक दुर्बलता में बहुत बड़ा अंतर है। यह अंतर सैद्धांतिक नहीं है, गुणात्मक-क्वालिटी का अंतर है। विनोबा, गांधी और बादशाह खां इनकी दुर्बलता में जो अंतर है, वह क्वांटीटी का, पैमाने का, मात्रा का, परिमाण का है। शरीर एक कम कमजोर है, एक अधिक कमजोर है, लेकिन सारी स्त्रियों में और सारे पुरुषों में जो शारीरिक दुर्बलता का अंतर है वह गुणात्मक है, प्रकार का अंतर है।

स्त्री के शरीर का उपयोग उसकी मर्जी के खिलाफ, उसकी सम्मति के बिना किया जा सकता है। यहां पर यह अंतिम समस्या है, स्त्री जीवन का यह प्रश्न है, जिसका मुकाबला हर स्त्री को करना पड़ेगा। बाकी सारी समस्याएं गौण हो गयी हैं, सारी समस्याओं के उत्तर संविधानों में दिये गये हैं। सारी समस्याओं के उत्तर देने के लिए पुरुष ने परिस्थिति पैदा कर दी है। लेकिन इस समस्या का उत्तर पुरुष नहीं दे सकता। क्योंकि इसमें तो पुरुष ही समस्या है। यह जो स्त्री की कमजोरी है, दुर्बलता है, इसमें पुरुष ही समस्या बन जाता है। जो स्वयं समस्या है, उसका उत्तर वह कैसे दे सकता है? इस दिशा में कुछ खोज-प्रगति हो सकती है? अगर हो सकती है तो स्त्री के लिए भविष्य है। और अगर नहीं हो सकती तो उसे मध्य युग की तरफ लौटना होगा, प्राथमिकता की तरफ लौटना होगा। प्राथमिकता की तरफ लौटने की कोशिश आज समाज में हो रही है। यूरोप और अमेरिका का हिप्पी सम्प्रदाय इसका उदाहरण है। इसमें स्त्री और पुरुष दोनों के संबंध में कुछ मुक्तता आ सकती है लेकिन स्त्री की स्वतंत्रता स्थापित नहीं हो सकती।

स्त्री की स्वतंत्रता की एक ही शर्त है कि उसकी सम्मति के बिना उसके शरीर का उपभोग न हो सके। अब इसमें शारीरिक शक्ति का कोई प्रश्न नहीं है। बेहोशी में भी स्त्री के शरीर का उपभोग हो सकता है। केवल यह समस्या शारीरिक शक्ति की नहीं है। इसलिए शारीरिक शक्ति के आधार पर इसका हल नहीं खोजा जा सकता। आज तक क्या हुआ है? इसको शारीरिक शक्ति का अभाव मान कर शारीरिक शक्ति के आधार पर इसका हल खोजने की कोशिश की गयी। इसलिए स्त्री कहीं नहीं पहुंच सकी। उसने अपनी इस कमजोरी को मंजूर कर लिया। यही कारण है कि स्त्रियों में जिसे मित्रता कहते हैं, वास्तविक अर्थ में यथार्थ मित्रता, कायम नहीं हो सकी।

एक स्त्री दूसरी स्त्री का भरोसा नहीं कर सकती, इसलिए नितांत विश्वास, असीम विश्वास, स्त्री को स्त्री में नहीं होता। सारी गोपियां अपने को कृष्ण के सामने खोल सकती हैं, द्रोपदी अपनी लज्जा के निवारण का साधन कृष्ण को बना सकती है और कृष्ण जब चीर बन जाता है, तब उसके बीच में और द्रोपदी के बीच में कोई पर्दा नहीं रह जाता, लेकिन किसी स्त्री के विषय में द्रोपदी यह सोच नहीं सकती, किसी स्त्री के विषय में गोपियां नहीं सोच सकतीं। क्यों नहीं सोच सकती? इसलिए कि यह स्त्री जीवन की अंतिम समस्या है। आप विचार कर देखें तो यह केवल सामाजिक समस्या नहीं है, यह वैज्ञानिक भी है, नैतिक भी है और आध्यात्मिक भी है; क्योंकि पूरे जीवन की यह समस्या है। इसमें से जो संस्कार बन गये हैं, बड़े गलत बन गये हैं। वे तो बनने वाले ही थे। स्त्री की इस कमजोरी से पुरुष ने लाभ उठाया और पुरुष को स्त्री ने लाभ उठाने दिया।

एक स्त्री दूसरी स्त्री का भरोसा नहीं कर सकती, इसलिए नितांत विश्वास, असीम विश्वास, स्त्री को स्त्री में नहीं होता। सारी गोपियां अपने को कृष्ण के सामने खोल सकती हैं, द्रोपदी अपनी लज्जा के निवारण का साधन कृष्ण को बना सकती है और कृष्ण जब चीर बन जाता है, तब उसके बीच में और द्रोपदी के बीच में कोई पर्दा नहीं रह जाती।

...क्रमशः अगले अंक में

प्रार्थना यानी सर्वत्र हरि-दर्शन

❑ विनोबा

गांधीजी के कारण हिन्दुस्तान में एक रिवाज पड़ गया है कि हरेक आश्रम और संस्था में सुबह-शाम प्रार्थना चलती है। परंतु यह केवल एक सदाचार मात्र है। उस पर हमारी उतनी श्रद्धा नहीं होती, जितनी होनी चाहिए। परिणाम यह है कि प्रार्थना तो हम कर डालते हैं परंतु जीवन पर उसका कोई असर नहीं होता। परमेश्वर की प्रार्थना का, भक्ति का रहस्य तो तब मालूम होता है, जब मनुष्य अहंकार छोड़कर केवल हरिमय होने की चेष्टा करता है।

''पहले के संतों का यह दावा नहीं था कि हम दुनिया का परिवर्तन करने जा रहे हैं। उनका दावा यही था कि हम ईश्वर के पास जाना चाहते हैं, उसकी कृपा हासिल करना चाहते हैं कि यह ईश्वर का प्रकाश न सिर्फ हमें मिले बल्कि सारी दुनिया को मिले जिससे कि मनुष्य में परिवर्तन हो, समाज-व्यवस्था में परिवर्तन हो, एक क्रांति हो।''

भजन, पूजन, प्रसाद-सेवन आदि भक्ति के साधन माने गये हैं। इन सबसे भक्ति का जितना संबंध माना जायेगा, उससे भी ज्यादा संबंध भूदान-यज्ञ का भक्ति से माना जायेगा, क्योंकि भूदान-यज्ञ में हम साक्षात् नारायण (जनता) की सेवा करते हैं, काल्पनिक सेवा या मूर्ति की पूजा नहीं करते। इसलिए जो भूदान के कार्यकर्ता हैं, वे यह दावा कर सकते हैं परंतु आज यह दावा नहीं करते, क्योंकि उसका गहरा दर्शन हमें नहीं हुआ है।

भूदान हमारे आंदोलनों जैसा नहीं है। हमारे जो मुख्य-मुख्य कार्यकर्ता हैं, उनकी आंदोलनकारी मनोवृत्ति नहीं होनी चाहिए। वैसे तो इसमें हजारों, लाखों कार्यकर्ता आयेंगे। मैं उनकी बात नहीं कह रहा हूं। लेकिन जो कार्यकर्ता इसमें पूजा योग देंगे, उन्हीं के लिए कह रहा हूं। गंगा की जो मूलधारा होती है, वह स्वच्छ, निर्मल होनी चाहिए। फिर बाद में दूसरे नाले आयें तो कोई हर्ज नहीं। जो पूरा समय और योग देने वाले कार्यकर्ता हैं, वे इस भूदान-गंगा की मूलधारा हैं। इसलिए उनको यह दर्शन होना चाहिए कि इस काम में हम साक्षात् नारायण की सेवा करते हैं। इसमें उनका सारा जीवन भक्तिमय होगा।

हम जब यात्रा करते हैं तो कुछ लोग दान देते हैं, कुछ नहीं भी देते। लेकिन उन सबकी तरफ देखने की हमारी दृष्टि भक्ति के कारण बदल जायेगी, उस हालत में इस आंदोलन की शक्ति प्रकट होगी। दूसरे आंदोलनों में तो यह होता है कि आंदोलन कभी ऊपर उठता है तो कभी नीचे गिरता है। आंदोलन का मतलब ही है—'दोलायमान'। इसलिए यह आंदोलन नहीं है। यह 'आरोहण' है। इसमें तो सतत ऊपर ही चढ़ना है। काम करते समय हमें कभी जमीन मिलेगी, कभी नहीं मिलेगी। कभी लोग शंका उठायेंगे, कभी गुस्सा होंगे। कभी अहंकार दिखेगा। इन सबका दर्शन होगा।

परंतु हमें ऐसी आंतरिक अनुभूति होनी चाहिए कि ये सब दर्शन ऊपर-ऊपर के हैं। जैसे सुवर्ण के, सोने के कई प्रकार के अलंकार बनाये जाते हैं। इस बात को हम पहचानते हैं। उसी तरह हमारे सामने जो कोई आये, कोई बुरा मालूम हो तो भी ये सब भले-बुरे के बाहरी आकार ही हैं। असल वस्तु तो सुवर्ण ही है। कोई अलंकार टेढ़ा हो तो भी हम उसे फेंक नहीं देते। यह जो अंतर में अनुभव होगा, वह सबके लिए होना चाहिए। इसके लिए भगवान की प्रार्थना की जरूरत है। उसमें हम ईश्वर के सामने खड़े हो जाते हैं और दिल का दरवाजा खोल देते हैं जिससे कि वह अंदर आ सकता है। फिर हमारी संकुचित मनोवृत्ति खतम हो जाती है और हृदय व्यापक बनता है। इसलिए यह तो बाहर की व्यापकता को अंदर लेने की प्रक्रिया है। जिस प्रकार शरीर के लिए स्नान और स्वच्छ हवा आवश्यक है, उसी तरह हमें आध्यात्मिक हवा भी जरूरी है। इसलिए प्रार्थना का महत्त्व है।

इस दृष्टि से प्रार्थना और भजन को लीजिए। पहले के वैष्णवों में जो प्रेरणा थी, उसमें कुछ कमियां हैं परंतु वह एक उत्तम वस्तु है और वह हममें ज्यादा होनी चाहिए। मैंने चांडिल सर्वोदय-सम्मेलन में कहा था कि ''पहले के संतों का यह दावा नहीं था कि हम दुनिया का परिवर्तन करने जा रहे हैं। उनका दावा यही था कि हम ईश्वर के पास जाना चाहते हैं, उसकी कृपा हासिल करना चाहते हैं कि यह ईश्वर का प्रकाश न सिर्फ हमें मिले बल्कि सारी दुनिया को मिले जिससे कि मनुष्य में परिवर्तन हो, समाज-व्यवस्था में परिवर्तन हो, एक क्रांति हो।'' हिंसा से क्रांति करना तो बहुत आसान बात है। उसके लिए सिर्फ बाहर का ही रूप बदलना पड़ता है, लेकिन अहिंसा से क्रांति करनी हो तो अंदर से बदलना पड़ता है। इसमें तो मानव के हृदय में प्रवेश करके बदल करने की बात है। लोग इतनी बड़ी उम्मीद रखते हैं तो उनके लिए भक्ति मार्ग आवश्यक ही है।

जो पुराने संत थे वे समझते थे कि व्यक्ति की शुद्धि हो और उसके लिए वे सेवा भी

करते थे। वहीं तक उनका काम सीमित था। परंतु दुनिया को कोई रूप देना है, यह अहंकार कहिये या आदर्श कहिये या फिर 'मिशन' कहिये यह उनमें नहीं था। इसलिए हमें एक कदम आगे जाना है। यह जो हमारा दावा है, वह बड़ा साहस का है कि हमें बुद्ध भगवान और संत ये सब जितने आगे गये थे, उससे भी एक कदम आगे बढ़ना है। जब हमारा और एक कदम आगे बढ़ने का दावा है तो हमें भी उसके लायक बनना चाहिए। मूर्ति को भगवान समझकर उसकी पूजा करना कठिन बात नहीं है क्योंकि मूर्ति को न राग-द्वेष होता है, न क्रोध। इसलिए वह भगवान का प्रतीक बनने के सर्वथा उपयुक्त है। लेकिन जब हम मनुष्य को ही नारायण स्वरूप मानते हैं, तब तो बात कठिन हो जाती है। यह नारायण कभी क्रोध भी करता है, कभी जमीन कम देता है, कभी ज्यादा देता है। हमारी कल्पना के अनुसार वह नहीं बरतता। ऐसी हालत में उसे नारायण समझना कुछ कठिन हो जाता है।

हम लोगों में यह एक खामी है। हम कोई काम उठाते हैं तो बाह्य काम में मतभेद हो जाता है। प्रथम स्थान किसे मिले, गौण स्थान किसे मिले, इस पर मतभेद चलता है। इसका मतलब है कि सामान्य स्तर पर ही झगड़ा होता है। अगर भूदान-यज्ञ कोई फंड इकट्ठा करने का काम होता या मांगने का काम होता तो उसमें यह सब चल सकता था। हमने कहीं-कहीं देखा है कि कुछ लोग धमकाकर या दबाव डालकर भूदान हासिल करते हैं। वोट हासिल करने में जो हथकंडे इस्तेमाल किये जाते हैं, वे हथकंडे भूदान प्राप्त करने में इस्तेमाल किये जायें तो हृदय-परिवर्तन, फिर जीवन-परिवर्तन और फिर समाज-परिवर्तन की हमारी जो बात है, वह मिट जाती है। हमारा यह कोई जमीन प्राप्त करने का आंदोलन नहीं है। लोगों में परिवर्तन लाने का आंदोलन है। इसलिए हमारे काम में श्रद्धा होनी चाहिए, भक्ति की गहराई होनी चाहिए।

वास्तव में हमारा सुबह से शाम तक व्यवहार ही ऐसा होना चाहिए, हमें यह कोशिश करनी चाहिए कि हम मानें कि जिस किसी का भी दर्शन हो, वह हरिदर्शन ही है। अंदर से जो यह कोशिश चलेगी, वह ठीक से चल रही है या नहीं, यह देखने के लिए हमें सतत् जागरूक रहना चाहिए। इसलिए प्रार्थना की जरूरत है। प्रार्थना में सब भक्तजन अंतर्मुख होकर बैठते हैं और ईश्वर के सामने हैं, ऐसा खयाल करते हैं। हमारे दिनभर के काम से हमारी परीक्षा होती है। अगर यह खयाल रहा तो इस आंदोलन का तेज बढ़ेगा। हमें किसी प्रकार का संकोच या परदा नहीं रखना चाहिए। जब हम दूसरे मनुष्य के साथ व्यवहार करते हैं तो हमें ऐसा लगना चाहिए कि हम ही अपने आपसे व्यवहार कर रहे हैं। ऐसा हमारा ढंग रहा तो यह काम बहुत जल्द आगे बढ़ेगा।

वोट हासिल करने में जो हथकंडे इस्तेमाल किये जाते हैं, वे हथकंडे भूदान प्राप्त करने में इस्तेमाल किये जायें तो हृदय-परिवर्तन, फिर जीवन-परिवर्तन और फिर समाज-परिवर्तन की हमारी जो बात है, वह मिट जाती है। हमारा यह कोई जमीन प्राप्त करने का आंदोलन नहीं है। लोगों में परिवर्तन लाने का आंदोलन है।

दुनिया क्या कहती है, अखबार वाले हमारे बारे में क्या लिखते हैं, कोई स्तुति करता है या निन्दा इसकी कोई चिन्ता नहीं होनी चाहिए। अगर हमारा काम स्वच्छ, निर्मल, निरहंकार है तो हमने पूरा हासिल कर लिया है। 'तृणादपि सुनीचेन, तरोरिव सहिष्णुना''— ऐसा हमें होना चाहिए। शायद यह चैतन्य महाप्रभु का ही वाक्य है या उनके पंथ का है। भक्त को खुद को तिनके से भी नीच मानना चाहिए और जैसे वृक्ष सहिष्णु होता है, वैसे ही भक्त को भी सहिष्णु होना चाहिए। अगर यह वाक्य हमारे जीवन में आ जाये तो यहां पर जो चंद लोग बैठे हैं, वे ही सारे बंगाल में ज्योति प्रकट करेंगे। ❑

सम्पूर्ण क्रांति दिवस पर संगोष्ठी

लोकनायक जयप्रकाश नारायण द्वारा चलाये गये सम्पूर्ण क्रांति अभियान दिवस पर गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्र, कानपुर में 'वर्तमान संदर्भ में लोकतंत्र की दशा एवं दिशा' पर परिचर्चा आयोजित हुई।

विषय प्रवेश करते हुए कुलदीप सक्सेना ने परिचर्चा का संदर्भ स्पष्ट किया। विस्तार देते हुए खादी ग्रामोद्योग महासंघ अध्यक्ष सुरेश गुप्ता ने अपने विचार बच्चों के बीच व्यक्त किये जाने की आवश्यकता पर बल दिया। श्री अतहर नईम, कन्हैयालाल गुप्त, योगेश श्रीवास्तव, पत्रकार महेश शर्मा, शरद प्रकाश अग्रवाल, नौशाद आलम मंसूरी ने इस विचार का समर्थन किया।

गायत्री परिवार के मनोज सेंगर एवं छोटे भाई नरोना ने निःस्वार्थ समाज सेवा पर बल दिया। अध्यक्षता करते हुए श्री कैलाशनाथ त्रिपाठी ने कहा कि यह मूल्यों के पतन का युग है, हमारी नयी पीढ़ी अपने प्राचीन प्रतीकों को विस्मृत करती जा रही है। तंत्र को बदलने की आवश्यकता है।

कार्यक्रम का संचालन गांधीवादी जगदम्बा भाई एवं संयोजन बिन्दा भाई ने किया। **–बिन्दा भाई**

पर्यावरण

पर्यावरण पर सबसे बड़ा खतरा भारी उद्योग का

❑ राधा भट्ट

(सर्व सेवा संघ की पूर्व अध्यक्ष सुश्री राधाभट्ट की यह टिप्पणी सर्वोदय जगत, 16-28 फरवरी, 2014 अंक 13 में, पी. के. खुराना के प्रकाशित 'उद्योग, विकास और पर्यावरण' आलेख के जवाब में है, जो हू-ब-हू यहां प्रस्तुत है। **सं.***)*

भारी उद्योगों के प्रति सहानुभूति रखने वाला आपका लेख 'सर्वोदय जगत' के 16 से 28 फरवरी, 2014 के अंक 13, पृष्ठ 13 पर में पढ़ने को मिला। आपने 'इंस्टीट्यूट ऑफ फाइनेंशियल मैनेजमेंट एंड रिसर्च' के अध्ययन 'भारतीय राज्यों का पर्यावरण स्थिरता सूचकांक' को अपने लेख का आधार बनाया है परंतु अध्ययनकर्ताओं की अपनी दृष्टि पर्यावरण तथा उस पर्यावरण के साथ जीने वाले आमजन के प्रति कैसी है, इसको शायद आप सूक्ष्मता से नहीं जानते हों। वे (अध्ययनकर्ता) समाज के किस तबके से आते हैं, यह जानना मुझे बहुत जरूरी लगता है। दूसरी बात जो आपने अपने लेख में सिद्ध करने का प्रयास किया है वह इन पंक्तियों में दिखायी पड़ती है। *''यह आवश्यक नहीं है कि किसी राज्य में पर्यावरण का नुकसान उद्योगों के ही कारण होगा, यानी यह भी आवश्यक नहीं कि उद्योग पर्यावरण के लिए नुकसानदेह होंगे ही।''*

आपका यह तर्क सही है यदि औद्योगिक कंपनियां मुनाफा कमाने की बेतहाशा दौड़ में न घुसकर अपनी फैक्ट्रियों के रासायनिक गंदे जल व चिमनियों से निकलने वाले धुँएँ को पूरी तरह शुद्ध करने की प्रक्रिया का शत-प्रतिशत पालन करते तो नदियों का जल जहरीला नहीं होता, वायु-प्रदूषण से वहां के निवासियों का सवास्थ्य खराब नहीं होता और जल स्रोतों अथवा भूजल का स्तर खतरनाक सीमा तक नहीं घटता किन्तु वास्तविक जिन्दगी में यह सब हो रहा है। यह आप भी जानते हैं उत्तराखंड की तराई में सिड़कुल औद्योगिक क्षेत्र के गंदे विषैले जल ने उस छोटी नदी का पानी इतना प्रदूषित कर दिया था कि स्थानीय कृषकों के पालतू पशु उस पानी को पीकर मरने लगे, उद्योगपतियों पर सख्ती की गयी तो उन्होंने गहरे कुँएँ खोदकर उनमें यह रासायनिक गंदगीवाला जल डालना शुरू किया। जो वहां के निवासियों के हैंडपंप से आते भूजल द्वारा उनके पेयजल को जहरीला कर गया। अप्रत्याशित रूप से वहां कैंसर के रोगियों की संख्या बढ़ गयी।

सवाल उद्योगों की ईमानदारी का है। ईमानदारी स्थानीय जन-जीवन के प्रति, स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों के प्रति, जो वहां के मानवों के जीवन के बुनियादी आधार हैं। उद्योगों के साथ लाजिमी तौर पर आने वाली जीवन-शैली, केन्द्रित होती बस्तियां, बढ़ता नगरीकरण, डामर या सीमेंट से धरती की साँस को घोट देने वाली चौड़ी सड़कें और उन पर बढ़ते जाते वाहनों का धुँआ, उनके सामने आने वाले हरे वृक्षों को भी देखना पड़ेगा। जिन्होंने बताया है कि सीमेंट पलांट्स और स्टोन क्रेशर आदि की धूल ने स्थानीय निवासियों में श्वांस संबंधी रोगों में तेजी से वृद्धि कर दी है। इतना सघन वायु-प्रदूषण क्या पर्यावरण का क्षरण नहीं है?

उत्तराखंड में जनपद अल्मोड़ा की सोमेश्वर घाटी में प्रस्तावित एक सीमेंट प्लांट का हमने पिछले महीनों में ही विरोध किया है। क्योंकि :

1. प्रस्तावित सीमेंट प्लांट के लिए खोदे जाने वाले खनिज के लिए चयनित पर्वत से कोसी नदी की सहायक नदी की कई धाराएं उद्गमित होती हैं, जिनके स्रोत इस सीमेंट उद्योग से नष्ट होने वाले थे।

2. सीमेंट प्लांट के उपयोग में आने वाला 1 लाख लीटर जल प्रतिदिन उसी नदी से उठाया जाना था तो उस उपजाऊ घाटी की कृषि को पानी मिलना दुर्लभ हो जाता।

3. सीमेंट प्लांट का मलबा इन्हीं नदियों में बहकर जाता और आगे जाकर नदी के तल को भर कर नदी के रहे सहे प्रवाह को भी बाधित कर देता।

4. यह सीमेंट प्लांट कोसी नदी के घटते जल को और तेजी से घटा देता। मैं यह

जानकारी दूं कि कोसी नदी का पानी एक आँकड़े के अनुसार प्रति वर्ष घटता जा रहा है।

5. उक्त पर्वत श्रेणी की चारों ओर बसे गांवों के लोग पानी, ईंधन व चारे के लिए इस पर्वत के जंगलों पर ही निर्भर हैं। यदि पर्वत खुदने लगता तो घासों, वृक्षों आदि का अस्तित्व ही नहीं रहता। तब इन गांवों के लोग अपनी बुनियादी आवश्यकताओं के अभाव में अपनी मूलभूमि से पलायन करने को विवश हो जाते।

जब हम पर्यावरण की चिन्ता करते हैं। तब हमें पर्यावरण की रक्षा करने वाले और उसके साथ मैत्री भाव से जीने वाले उस आमजन की भी फिक्र करनी चाहिए। प्रकृति व समाज मिलाकर ही समग्र पर्यावरण होता है। प्राकृतिक संसाधनों, जल-जंगल-जमीन पर पहला अधिकार इन समुदायों का है। इक्कीसवीं सदी की मानसिकता जीवन को टुकड़ों में (कम्पार्टमेन्ट्स) में देखती है, जबकि जीवन समग्रता में एक-दूसरे से जुड़ा हुआ है। भारी उद्योगों को जीवन के हर पहलू के लिए एकमात्र हल मान लेना या उन्हें विकास का एकमात्र मॉडल मानकर उनके पक्ष में इकतरफा व्यवहार करना अंधी गली में कदम बढ़ाने जैसा अभिक्रम हो सकता है। इसे हमें समझना होगा तथा नागरिकों को और हमारी सरकारों को भी समझाना पड़ेगा।

आप अपने लेख में लिखते हैं 'कृषि लाभदायक व्यवसाय नहीं रह गया है। तथा विकास के लिए रोजगार के नये अवसर पैदा करने के लिए आपको बड़े उद्योगों का सहारा लेना ही पड़ेगा।' मुझे लगता है कि आपके इस वाक्य में दो बहुत बड़े भ्रम छिपे हैं। पहला यह कि कृषि लाभदायक व्यवसाय नहीं रहा। सबको जीवित रखने वाला एकमात्र आधारित यह कार्य क्यों अलाभदायक हो गया है? हमें पहले इसके कारणों को खोजना होगा। मैं तो कहती हूं मानव जाति जब तक भूख लगने पर अन्न, फल, साग-सब्जी, दूध, मांस-मछली आदि (जिसे केवल धरती माँ ही पैदा कर सकती है) को आहार बनाये रखेगी, तब तक कृषि सदा एक लाभदायक कर्म रहेगा। क्योंकि उसके आहार को कोई फैक्ट्री, कोई मशीन या उद्योग नहीं पैदा कर सकता। वह कृषक द्वारा की गयी सेवा से धरती माता ही पैदा करती है। कृषक व कृषि की उपेक्षा करने वाली नीतियां, उद्योगों को अत्यधिक प्राथमिकता देकर कृषि को उसका वाजिब स्थान न देकर, उसके उत्पाद के मूल में घाटा देकर, उसके संसाधनों, जमीन, जल, जंगलों की लूट करके और उसके जीवनदायी कार्य को अकुशल कार्य मानकर उसकी जो अप्रतिष्ठा इस देश में हुई है, उसके कारण कृषि की अवहेलना हुई है। हमें उद्योगों व औद्योगीकरण तथा कृषि को समान स्तर पर महत्त्व देना होगा वरन् कई अवसरों पर कृषि को जीवित रखने के लिए उद्योगों पर रोक भी लगानी पड़ेगी क्योंकि कृषि उत्पाद ही मानव जीवन का प्राणाधार है। आज उद्योगों को प्राथमिकता देकर जो विषमता की खाई खड़ी कर दी गयी है वह मानव व उसके पर्यावरण दोनों ही के लिए हानिकारक ही नहीं विनाशक है।

हमें उद्योगों व औद्योगीकरण तथा कृषि को समान स्तर पर महत्त्व देना होगा वरन् कई अवसरों पर कृषि को जीवित रखने के लिए उद्योगों पर रोक भी लगानी पड़ेगी क्योंकि कृषि उत्पाद ही मानव जीवन का प्राणाधार है। आज उद्योगों को प्राथमिकता देकर जो विषमता की खाई खड़ी कर दी गयी है वह मानव व उसके पर्यावरण दोनों ही के लिए हानिकारक ही नहीं विनाशक है।

यह जमाने के साथ कदम से कदम मिलाने भर की राह नहीं है। दूर दृष्टि से सोचिये, काल व क्षेत्र के लंबे-चौड़े विस्तार को दृष्टि में रखकर विचार कीजिए। खेती किसानी मानव समाज की मूल जीवन-पद्धति है। उससे विमुख मानव जी नहीं पायेगा। विश्व का क्षरित होते पर्यावरण परिवर्तन के विकट परिणाम, धरती का तेजी से घटता जल कोश यह साफ-साफ बता रहे हैं कि भारी उद्योगों की राक्षसी-भूख मानव जीवन के आधार-साधनों को निगलती और मानव समाज की समग्रता दिन प्रतिदिन क्षीण होती जा रही है। हमें स्वस्थ, स्वावलंबी, समतायुक्त, प्रकृति माता के वरदान से संयोजित समाज के विकास का लक्ष्य बनाना है तो उद्योगों को एक मर्यादा में रख कर खेती-किसानी को उसकी प्रतिष्ठा देनी ही होगी। वही मानव व पर्यावरण दोनों को बचाने तथा विश्व की समस्याओं का निराकरण करने की इक्कीसवीं सदी की एकमात्र राह हो सकती है। ❑

निवेदन!

'सर्वोदय जगत' का यह नया रूप आपको कैसा लगा? हमें जरूर बताएं, ताकि इसे और भी आकर्षक व पठनीय बनाया जा सके।

× × ×

आप सभी सुहृद पाठकों, ग्राहकों, लेखकों व शुभ-चिन्तकों से अनुरोध है कि अपने समसामयिक महत्त्वपूर्ण

आलेख

व क्षेत्रीय कार्यक्रमों की

रपट

पत्रिका के लिए जरूर भेजें। आपके सहयोग की सादर अपेक्षा है। –सं.

खेती की लागत कम करने के उपाय

❑ मणिशंकर उपाध्याय

खेती को लाभदायक बनाने के लिए दो ही उपाय हैं—उत्पादक को बढ़ाएं व लागत खर्च को कम करें। कृषि में लगने वाले मुख्य आदान हैं बीज, पौध-पोषण के लिए उर्वरक व पौध-सरंक्षण, रसायन और सिंचाई। खेत की तैयारी, फसल काल में निराई-गुड़ाई, सिंचाई व फसल की कटाई-गहाई-उड़ावनी आदि कृषि-कार्यों में लगने वाली ऊर्जा की इकाइयों का भी कृषि उत्पादन में महत्त्वपूर्ण स्थान हैं।

इनका उपयोग किया जाना आवश्यक है, परंतु सही समय पर सही तरीके से किये जाने पर इन पर लगने वाली प्रति इकाई ऊर्जा की क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। इनका अपव्यय रोककर व पूर्ण या आंशिक रूप से इनके विकल्प ढूंढ़कर भी लागत को कम करना सम्भव है।

इस दिशा में किये गये कार्यों व प्रयासों के उत्साहजनक परिणाम प्राप्त हुए हैं। इनसे कृषकों को अधिक लाभ मिलने के साथ ही पर्यावरण को प्रदूषित होने से भी बचाया जा सकता है।

पौध-पोषण : पौध-पोषण के लिए बाजार से खरीदे गये नत्रजन, स्फुर और पोटाशयुक्त उर्वरक उपयोग में लाए जाते हैं। प्रयोगों में पाया गया है कि रासायनिक उर्वरक के रूप में दी गयी नत्रजन (जो यूरिया, अमोनियम सल्फेट आदि द्वारा दी जाती है) का सिर्फ 33-38 प्रतिशत अंश तक काली चिकनी मिट्टी के कणों के साथ बँधकर पौधों को उपलब्ध नहीं हो पाता है।

इन उर्वरकों की मात्रा को कम करने एवं उपयोग क्षमता को बढ़ाने में जीवांश खाद जैसे गोबर की खाद या कम्पोस्ट या केंचुआ खाद आदि का प्रयोग लाभदायक पाया गया है। ये जैविक खाद किसान अपने स्तर पर भी तैयार कर सकते हैं। इनके अलावा अखाद्य तेलों जैसे नीम, करंज आदि की खली का उपयोग किया जा सकता है। इन खलियों के चूरे की परत यूरिया के दाने पर चढ़ाकर यूरिया के नत्रजन को व्यर्थ नष्ट होने से बचाया जा सकता है।

नत्रजन वाले उर्वरकों की निर्भरता को कम करने के लिए जीवाणु कल्चर

राइजोबियम या एजेक्ओबेक्टर का उपयोग, गेहूँ, जवार, मक्का, कपास आदि फसलों के साथ अंतरवर्तीय फसल के रूप में चना, गेहूँ, उड़द, अरहर, चौला आदि का उपयोग लाभदायक पाया गया है। ये दलहन वर्गीय फसलें वातावरण की नत्रजन को लेकर न सिर्फ अपने उपयोग में लाती हैं, बल्कि अपनी जड़ों में स्थिर नत्रजन का लाभ साथ लगायी गयी अंतरवर्ती को भी पहुंचाती हैं। स्फुर (फास्फोरस) की उपयोग क्षमता को बढ़ाने के लिए स्फुर घोलक बैक्टीरिया का उपयोग किया जाना चाहिए।

अपने यहां अभी भी गोबर का उपयोग उपले या कंडे बनाकर ईंधन के रूप में किया जाता है। यदि इसे गोबर गैस में परिवर्तित कर सकें तो ईंधन की समस्या हल होने के साथ ही बेहतर गुणवत्ता की खाद भी प्राप्त हो जाती है। गांव में पशुओं की संख्या के आधार पर गोबर गैसों के निर्माण, रखरखाव की जिम्मेदारी ग्राम पंचायतों को सौंपी जा सकती है।

गेहूँ की फसल की कटाई के बाद खेतों को आग लगाकर साफ किया जाता है। इससे भारी मात्रा में जीवांश जलकर नष्ट हो जाते हैं। इसे जलाने के बाद फसल की कटाई के तत्काल बाद मिट्टी पलटने के हल से खेत को जोतकर ढेलेदार अवस्था में छोड़ दिया जाना चाहिए, जिससे कटे हुए पौधों के डंठल, ठूँठ आदि निचली सतह में जाकर मिट्टी से दब जायें और वर्षा आने पर स्वतः ही विघटित होकर जीवांश खाद बन जाते हैं।

फसलों में सिंचाई जल की उपयोग क्षमता बढ़ाने के लिए एक नाली छोड़कर एकांतर (अल्टरनेट) सिंचाई करना, स्प्रिंकलर (फुहार) सिंचाई, टपक सिंचाई आदि विधियां व साधनों का प्रयोग फसल की कतारों के बीच अवरोध परत (मलच) का उपयोग आदि तरीके काम में लाये जाने चाहिए।

पौध-संरक्षण : रोगों और कीड़ों की बहुतायत आधुनिक और लगातार कृषि की देन है। हमारा लक्ष्य फसलों को इनके द्वारा की जाने वाली हानि से बचाना है न कि नष्ट करना। कीट व रोगनाशक रसायनों का असर सिर्फ नुकसान करने वाले कीड़ों व रोगों पर न होकर लाभ पहुंचाने वाले कीड़ों व रोगों पर भी होता है।

इनके नियंत्रण के लिए स्वच्छ कृषि, परजीवी व शिकारी कीड़ों को हानि पहुंचाने वाले कवकों (फफूँदों) व वायरस का प्रयोग असरकारक पाया गया है। इनके अलावा नीम, करंज, हींग, लहसुन, अल्कोहल आदि के उपयोग, अंतरवर्ती फसल, प्रपंची फसल फेरोमेन, ट्रेप, प्रकाश प्रपंच आदि साधनों के उपयोग से रसायनों के उपयोग पर खर्च होने वाली राशि में कमी की जा सकती है। कीटनाशी रसायन अंतिम विकल्प के रूप में काम में लायें। ❑

श्वास की आयुर्वेदिक अनुभूत चिकित्सा

❑ डॉ. एस. के. श्रीवास्तव

आयुर्वेद का एक सिद्धांत है कि जिन कारणों से रोग उत्पन्न होते हैं, उनको दूर किया जाय, फिर चिकित्सा सूत्र निर्णय कर आहार-विहार व औषध का प्रयोग किया जाय। आयुर्वेद में दो प्रकार के रोगों की गणना है—सामान्यजा और नानात्मजा। वात, पित्त, कफ के दूषित होने से आहार-रहन-सहन में दोष व हानिकारक औषधियों से उत्पन्न विकार सामान्यज रोग हैं। ज्वर आठ प्रकार के हैं, श्वांस पांच प्रकार के हैं, प्रमेह 20 प्रकार के हैं।

नानात्मज वह रोग है जो केवल एक दोष से होते हैं जैसे वायु के 80 विकार, पित्त के 40 विकार, कफ के 20 विकार, जहां तक श्वांस रोग है वह सामान्जय व्याधियों में है जिसको श्वास, अस्थमा, दमा कहा जाता है।

श्वास इस समय भारत में ही नहीं विश्व में इस प्रकार फैल गया है कि किसी भी चिकित्सा प्रणाली का विशेषज्ञ यह कह सकने की स्थिति में नहीं है कि वह श्वास रोग की सम्पूर्ण चिकित्सा कर सकता है और अब यह चिकित्सा पश्चात रोगी को नहीं होगा। मैं कुछ वर्षों पूर्व मलेशिया गया था, विश्व के जाने-माने चिकित्सकों ने मलेशिया प्रशासन द्वारा आयोजित अधिवेशन में लाग लिया था, इनमें 100 में से 5 व्यक्ति इस श्वास से पीड़ित थे। यह ठीक है कि क्षणिक लाभ पहुंचाने वाली कुछ औषधियां आ गयी हैं, भले ही उनका दुष्प्रभाव हो, किन्तु कष्टदायक व्याधि से पीड़ित मनुष्य इनके प्रयोग के लिए बाध्य होते ही हैं।

विकसित देशों में तो एक भयानक स्थिति पैदा हो गयी है, कुछ असाध्य रोगियों पर इन हानिकारक औषधियों के बुरे परिणाम देखने को मिल रहे हैं। वे अब इस समस्या के समाधान की 40 प्रचलित चिकित्सा प्रणालियों में ऐसे एक आयुर्वेद की ओर दौड़ रहे हैं। पश्चिमी देश आज तक आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली को अवैज्ञानिक मानते रहे हैं

लेकिन अब भारतीय जड़ी-बूटियों तथा औषधियों से प्रतिबंध हटाकर इसको अपनाने में आगे बढ़ रहे हैं।

मेरा दावा है कि आयुर्वेद उपचार से श्वास रोग से छुटकारा पाया जा सकता है। धूल, धुंआ व गंदी हवा से युक्त आवास से अतिशीतल स्थान पर जाना, अतिशीतल पेय का सेवन, अधिक व्यायाम, अधिक स्त्री प्रसंग, भोजन का नियमित समय पर नहीं करना, पेट में गैस अधिक बनने पर भी अन्नपन लेते रहना, अधिक उपवास, अधिक दुर्बलता तथा मस्तिष्क, हृदय, वृक्कों में किसी कारण से आघात भी श्वास रोग के कारण बन जाते हैं। इन कारणों से जब वायु कफ के साथ श्वास यंत्र को रोकने लगती है तब श्वास रोग होता है, इसके अलावा कुछ अन्य कारण भी हैं :

* किसी के माता-पिता को श्वास हो तो उनको विरासत में भी श्वास देखा गया है।
* किन्हीं कारणों से नींद पूरी नहीं करने से भी श्वास रोग के होने की संभावना रहती है।
* अधिक स्त्री प्रसंग।
* गर्म देश के रहने वाले मनुष्य यदि शीत प्राधान देश में रहने लगें।
* नजला-जुकाम कुछ दिन चले और तत्कालिक प्रभाव वाली दुष्प्रभावी औषध लेते रहें उन्हें भी श्वास रोग से पीड़ित देखा गया है।
* फ्रीज में रखे भोजन को बार-बार गर्म कर खाना।
* अनेक रोग ऐसे भी हैं जिनमें श्वास लक्षण रूप में देखा जाता है। इन अवस्थाओं में श्वास रोग के उपचार से लाभ नहीं होता, मूल व्याधि शांत होने

पश्चिमी देश आज तक आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली को अवैज्ञानिक मानते रहे हैं लेकिन अब भारतीय जड़ी-बूटियों तथा औषधियों से प्रतिबंध हटाकर इसको अपनाने में आगे बढ़ रहे हैं।

पर श्वास स्वयं शांत हो जाता है।

चिकित्सा : आयुर्वेद में चिकित्सा सूत्र जिसको उपक्रम की संज्ञा दी गयी है, दो प्रकार का होता है—एक लंघन दूसरा वृहण। जिस उपचार से शरीर हल्का हो जाय उसको लंघन कहा जाता है। इसकी भी दो संज्ञा है—संशमन, संशोधन। संशमन अर्थात् रोगों को पैदा करने वाले वायु-पित्त-कफ हैं, यदि इनमें विषमता हो जाय तो उनको समान अवस्था में लाया जाता है। इसमें पाचन शक्ति और अग्निदीपन पर बल दिया जाता है। उपवास औषध पर नहीं। संशोधन का अर्थ है शरीर-दोष मलों को बाहर निकाल दें।

श्वास रोग में जो संशोधन प्रक्रिया उपयोगी है वह वमन का ही प्रयोग सिद्ध है। कोई भी औषध प्रयोग करें पहले वमन रोगी को करायें। वमन कराने से पहले स्वेदन कराना चाहिए। 2-3 दिन शुद्ध घी पिलायें या खिचड़ी में कम-से-कम 250 ग्राम घी खिलायें। फिर गर्म पानी में बच, मैनफल, मुलैठी, सेंधा नमक डालकर प्रातः पिलायें। इसमें वमन द्वारा कफ निकल जाता है। स्रोत शुद्ध हो जाते हैं, फिर कोई भी श्वास नाशक औषधि सफल होती है। इसमें केवल एकाकी वनस्पतियों अथवा वनस्पतियों से बने सिद्ध योग, खनिज औषध, द्रव्य तथा पशु-पक्षियों से उपलब्ध मल-मूत्र से बनी औषधियां सिद्ध हैं। आयुर्वेद वनस्पतियों में वासा (अड़ूसा), छोटी करेली विशेष सिद्ध है।

कनकासव, वासारिष्ट, द्राक्षारिष्ट, द्राक्षासव, आस्तहरीत, दशमूलापटलघृत, च्यवनप्रास, स्वर्णभस्म, ताम्रभस्म, गोदन्ती, महालक्ष्मी विलास, सिद्ध मकरध्वज सिद्ध प्रयोग हैं। कुछ परम्परागत ऐसे भी प्रयोग हैं जो लाभ देते हैं। जो गाय प्रथम ब्याई है उसके प्रथम दूध जिसे खीस कहते हैं की भस्म कर 2 रत्ती की मात्रा देने से लाभ होता है, इसी प्रकार शिरीष के पुष्पों का रस या सप्तपर्ण के पत्रों का रस मधु के साथ लेने से लाभ होते देखा गया है।

आयुर्वेद में श्वास 5 प्रकार के बताये गये हैं। महाश्वास, उर्द्धश्वास, क्षुद्रश्वास, छिन्नश्वास, तमकश्वास। इनमें सबसे कष्टदायक अस्थमा या दमा है। लोगों का कहना है कि दमा या अस्थमा दम लेकर हो जाता है किन्तु आयुर्वेद ने यह सिद्ध कर दिया है कि पथ्यापथ्य के साथ उचित औषधियों के सेवन से दमा ठीक हो जाता है।

बादाम 10 दाने, मुनक्का 10 दाने, अंजीर 1 दाना, मधु दो चम्मच के नित्य सेवन से श्वास के दौरे बंद हो जाते हैं।

आँवले का मुरब्बा 250 ग्राम, सौंठ का मुरब्बा 125 ग्राम, पीपल चूर्ण 50 ग्राम, मधु 125 ग्राम नित्य सेवन से श्वास दोष रुकता है।

मोर के पंख की भस्म भी सिद्ध प्रयोग है। कुछ सिद्ध योग ये भी हैं—अपामार्ग क्षार, श्वासकुठार, सुबह-शाम। कनकासव भोजनोपरांत, खदिरादिवटी, मारिच्यादिवटी, चन्दामृतवटी लाभकारी है।

तम अवस्था में, जहां श्वास की चिकित्सा में वमन द्वारा संशोधन बताया गया है, विरेचन (दस्त) कराते रहना चाहिए और विरेचन भी अमलतास से करायें। अमलतास के 25 ग्राम गूदे को 200 ग्राम पानी में उबाल लें और इसमें से आधा दें, इससे अच्छा संशोधन होता है। श्वास रोगी आहार-विहार का ध्यान रखें। चावल, दही, खटाई, शीतल अन्नपान, फ्रीज में रखे फल, तली वस्तुएं, अधिक जागरण, कूलर, वातानुकूलित आवास का परित्याग, स्त्री-प्रसंग अधिक नहीं करें, तो श्वास रोगी पूर्णतः स्वस्थ हो जाता है। ❑

---

* *बी.ए.एम.एस.,आयुर्वेदरत्न, प्रमुख चिकित्सक, श्री सांईनाथ औषधालय, शेख क्लब चौराहा, देवास-455001*

आतंकवाद विरोधी दिवस

जिला करनाल सर्वोदय मंडल के कार्यकर्ता श्री मुस्लिम चौहान के प्रयास से बसमत कस्बे के राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय के प्राचार्य से मिलकर विद्यालय में आतंकवाद विरोधी दिवस मनाने का कार्यक्रम तय किया गया। 21 मई को विद्यालय के शिक्षक और करीब बारह सौ बच्चों ने मिलकर यह दिन मनाया। पहले पाँच-छः बच्चों ने अपने विचार रखे। प्राचार्य धर्मवीरजी ने अपने ढंग से बच्चों को आतंकवाद के खतरों से रू-ब-रू कराया।

भाई महावीर त्यागी मुख्य वक्ता ने देश और दुनिया को सामने रखते हुए आतंकवाद पर चर्चा की। उन्होंने कहा कि आज पूरी दुनिया आतंकवाद से त्रस्त है। कुछ देश पड़ोसी देशों में अशांति पैदा करने के लिए वहां की सरकारों को अस्थिर करने के लिए जनता में भय पैदा करने के लिए, आतंकवादी संगठनों को पालते और पोसते हैं। ऐसा भी देखने में आ रहा है कि उनके पाले पोसे ये संगठन उन्हीं के गले की फाँस बन रहे हैं। ये संगठन सब जगह जान-माल का खतरा बन रहे हैं। अब तो इन्होंने भय फैलाने के लिए आम आदमियों को भी मारना शुरू कर दिया है। आज ये आतंकवादी संगठन पूरी तरह हर प्रकार के आधुनिक हथियारों से जगह-जगह हमले कर रहे हैं। प्रदेश सर्वोदय मंडल और सभा में उपस्थित सभी लोगों ने आतंकवाद की पूरजोर शब्दों में निन्दा की और दुनिया को 'जियो और जीने दो' के मंत्र को अपनाने की सलाह दी।

–महावीर त्यागी

नदी सूखने से रोजी पर संकट

❑ बाबा मायाराम

''पहले हम दुधी नदी में मछली पकड़ते थे, अब नदी सूख गयी। खकरा और माहुल के पत्तों से दोना-पत्तल बनाते थे, अब उनका चलन कम हो गया। जंगलों से महुआ-गुल्ली, तेंदू, अचार लाते थे, वे अब नहीं मिलते। ऐसे में हमारी रोजी-रोटी का संकट बढ़ रहा है।'' यह कहना है पलिया पिपरिया के रज्झर समुदाय के लोगों का।

होशंगाबाद जिले के बनखेड़ी तहसील के पलिया पिपरिया गांव में नदी किनारे रज्झर मोहल्ला है। इस मोहल्ला के ज्यादातर बुजुर्ग और बच्चे करीब 20 साल पहले तक दुधी नदी में मछली पकड़ते थे।

सदानीरा दुधी विगत कुछ वर्षों से बरसाती नदी बन गयी है। गरमी आते ही जवाब देने लगती है। इस साल अभी दुधी की पतली धार चल रही है। पलिया पिपरिया में यह दिखती है लेकिन नीचे परसवाड़ा में कुछ जगह डबरे भरे हैं, धार टूट गयी है। इस नदी के किनारे रहने वाले रज्झर अब इन डबरों और कीचड़ में मछली पकड़ते हुए दिखायी देते हैं।

इस नदी में पहले मछलियां मिलती थीं और रज्झर समुदाय के लोगों का यह पोषण का मुख्य स्रोत हुआ करती थी। अब जब नदी सूख गयी है, बहुत मुश्किल है।

करीब 23 वर्ष पहले यहां के मनमोद नामक बच्चे ने एक बाल पत्रिका में लिखा था कि ''हम पांच भाई हैं और तीन बहनें। भाइयों में सबसे छोटा मैं हूं। और बहनों में सबसे छोटी प्रभा है। पहले हमारे दादा मछली लेने हर दिन नदियां जाते थे। हमारे घर मछलियां रखी रहती थीं। और थोड़ी-सी खेती-किसानी भी थी। मछली गांव में बेचते थे।''

उस समय दुधी में बारह महीनों पानी रहता था। दुधी यानी दूध की तरह पानी। दूधिया निर्मल साफ-स्वच्छ मीठा पानी। इस नदी में रज्झर समुदाय के बच्चे खेलते थे और मछली पकड़ते थे। वे मछली बेचकर ही अपनी गुजर-बसर करते थे।

यहां के पाड़िया, शंकर और टंटू रज्झर जैसे कई लोग मछली पकड़ने दिन-दिन भर नदी में फंदा डालते रहते थे। बच्चे नदी में उछलते कूदते हुए कपड़े की झोली बनाकर मछली पकड़ते थे। वे खेल-खेल में कुछ छोटी मछलियां भी पकड़ लाते थे। खुद भी पकाकर खाते और जो बच जाती थी, उसे बेच देते थे। अब नदी सूखने से इससे वंचित हो गये हैं।

पलिया पिपरिया के सरपंच आजाद का कहना है कि रज्झर समुदाय जो पहले अनुसूचित जाति में शामिल था, अब पिछड़ा वर्ग में शामिल कर दिया है। हालांकि इनकी मांग अनुसूचित जनजाति वर्ग में शामिल करने की थी। इनकी संस्कृति भी आदिवासियों से मिलती-जुलती है।

वे कहते हैं कि ऐसा करके यह निर्धन, अशिक्षित और पिछड़े समुदाय को अनुसूचित जाति की सुविधाओं से वंचित कर दिया गया है। इस गांव के रज्झर मोहल्ले में ही स्कूल है लेकिन उनके बच्चे सबसे कम पढ़े-लिखे हैं।

इस समुदाय के लोग परम्परागत रूप से लाख की खेती भी करते थे। लाख से चूड़ियां बनायी जाती हैं। लेकिन जिन कोसम के वृक्षों पर ये खेती होती थी, अब वे पेड़ ही नहीं बचे। जंगल साफ हो गया है। लोगों ने अपने खेतों से भी पेड़ काटकर खेत बना लिये।

महिलाएं बड़ी-बड़ी डलियों (टोकरियों) में लाख लेकर उसे धोने नदी में ले जाती थीं। लेकिन अब न लाख है और न ही वे कोसम के पेड़ हैं, जिनपर लाख होती थी।

रज्झर महिलाएं दोना-पत्तल बनाने का काम भी करती थीं। दोना-पत्तल खकरा और माहुल के पत्तों से बनाये जाते थे। दूरदराज के गांव के लोग यहां दोना-पत्तल लेने आते थे। लेकिन अब शादी-विवाह और सामूहिक भोज में मशीनों से बने दोना-पत्तल या प्लेटों का चलन हो गया है। जिससे उनका यह धंधा भी कम हो गया। फिर जंगल में पेड़ भी नहीं बचे हैं।

यहां के लोग पहले जंगल से बाबेर नामक घास से रस्सियां बनाते थे। अब जंगल में वह घास ही नहीं बची है जिससे रस्सियां बनाने का धंधा भी खतम हो गया है।

जब गांव के आसपास जंगल और परती जमीन होती थी तब न केवल वहां कोसम के वृक्षों पर लाख उगाने का काम होता था बल्कि उसमें पशुओं को चारा भी मिलता था। ये पशु उनके फिक्सड डिपाजिट की तरह होते थे। जब उन्हें पैसों की जरूरत पड़ती थी तब वे इन पशुओं को बेचकर अपना काम चला लेते थे लेकिन अब आसपास जंगल व परती जमीन न होने से पशुओं को चारा भी नहीं मिलता। नदी सूखने से इन पशुओं को पानी भी नहीं मिलता।

रोजगार नहीं होने से खेत-मजदूर के रूप में रज्झर काम करते हैं। यहां के हल्के रज्झर का कहना है कि इससे पूरे परिवार का खर्च चलना मुश्किल होता है। बहुत से लोग गन्ना काटने या दिहाड़ी मजदूरी पर काम करते हैं। कुछ वर्ष पहले जुन्हेंटा के मजदूर फसल कटाई के लिए बाहर जा रहे थे और सड़क हादसे में मारे गये थे।

अधिकांश रज्झर भूमिहीन हैं। लाख की खेती नहीं होने से, नदी सूखने के कारण मछली नहीं मिलने से जंगल से निस्तार नहीं होने से रज्झरों के सामने रोजी-रोटी की समस्या खड़ी हो गयी है। यानी मौसम बदलाव का हमारे पर्यावरण पर असर होने के साथ-साथ लोगों के जनजीवन पर भी गहरा असर हो रहा है।

पलिया पिपरिया के सरपंच आजाद का कहना है कि इस समुदाय की बेहतरी की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए। रोजगार उपलब्ध कराना चाहिए। कुछ परम्परागत रोजगारों को फिर से खड़ा करने पर भी विचार किया जाना चाहिए। ❑

हम वैकल्पिक समाज-रचना के प्रति प्रतिबद्ध हैं

वाराणसी में संपूर्ण क्रांति मित्र-मिलन में घोषणा

संपूर्ण क्रांति दिवस 5 जून व 6 जून को राजघाट, वाराणसी में सर्व सेवा संघ एवं संपूर्ण क्रांति राष्ट्रीय मंच के तत्त्वावधान में आयोजित मित्र-मिलन समारोह में तरुण शांति सैनिक, छात्र युवा संघ वाहिनी एवं जनमुक्ति संघर्ष वाहिनी के सदस्यों ने जिसमें 10 प्रदेशों के 55 साथी मौजूद थे, एकजुटता प्रदर्शित करते हुए एक वैकल्पिक समाज रचना के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की घोषणा की है।

संपूर्ण क्रांति दिवस 5 व 6 जून, 2014 को राजघाट, वाराणसी में संपूर्ण क्रांति मित्र-मिलन संपन्न हुआ। मिलन में 10 राज्यों—केरल, गोवा, महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड एवं पश्चिम बंगाल के संपूर्ण क्रांति आंदोलन से जुड़े 55 साथियों ने भाग लिया। सर्व सेवा संघ एवं संपूर्ण क्रांति राष्ट्रीय मंच द्वारा आयोजित मिलन में देश की वर्तमान सामाजिक एवं राजनैतिक परिस्थिति का विश्लेषण करते हुए इसमें संपूर्ण क्रांति आंदोलन के साथियों की भूमिका पर विशद चर्चा की गयी।

चर्चा का निष्कर्ष था कि वर्तमान समय में एक तरफ तो देश में फासीवाद, पूंजीवाद और कॉरपोरेट जगत के हितों का संरक्षण-पोषण योजनाबद्ध तरीके से किया जा रहा है तथा दूसरी तरफ समाज में गरीबों तथा शोषितों-उत्पीड़ितों के हाशिये पर सिमटते जाने, जाति, संप्रदाय तथा धार्मिक विभेदों के मजबूत होने से महिलाओं के खिलाफ आपराधिक आक्रामकता का खतरा लगातार बढ़ रहा है। इन विषमताओं के बढ़ने से समाज के मौजूदा ढांचे के टूटने तथा हिंसात्मक जातीय एवं सांप्रदायिक उन्माद बढ़ने की स्थिति पैदा हो गयी है।

सर्वोदय एवं संपूर्ण क्रांति विचारधारा को मानने वालों, अहिंसा, शांतिमयता तथा मानवीय मूल्यों पर आधारित वैकल्पिक समाज-रचना के लिए प्रतिबद्ध जमात के सामने यह एक गंभीर चुनौती है।

संपूर्ण क्रांति मित्र मिलने के प्रतिभागियों की राय थी कि इन चुनौतियों का सामना कोई भी अकेला नहीं कर सकता। वैकल्पिक समाज-रचना के लिए प्रतिबद्ध सभी संगठनों व साथियों को कुछ ठोस कार्यक्रम पर देशभर में सशक्त लोकमत तैयार करना होगा, तभी कुछ सार्थक परिणाम आ सकेंगे। मिलन के प्रतिनिधियों का यह मानना था कि इस राष्ट्रीय अभियान में युवाओं को विशेष रूप से जोड़ने का प्रयत्न किया जाय।

लोकतंत्र की मजबूती के लिए जनता के अधिकारों को बढ़ाने वाले चुनाव सुधारों—प्रतिनिधि वापसी के अधिकार (राइट टू रिजेक्ट) तथा एक उम्मीदवार को एक क्षेत्र से ही खड़े होने जैसी मांगों को एक मजबूत जन-आंदोलन का रूप देने का निर्णय भी किया गया।

मिलन में पूणे में गत 2 जून को हिन्दू राष्ट्र सेना नामक संगठन के लोगों द्वारा 24 वर्षीय युवक शेख की नृशंस हत्या की कड़े शब्दों में भर्त्सना करते हुए महाराष्ट्र सरकार और केन्द्र सरकार से मांग की गयी कि इस घृणित अपराध के दोषियों को सख्त सजा दी जाए। सोशल मीडिया का दुरुपयोग करते हुए ऐसी सांप्रदायिक वैमनष्यता फैलाने वाले संगठनों को प्रतिबंधित करने तथा समाज में सांप्रदायिक विद्वेष भड़काने वाले समाज विरोधी तत्त्वों के खिलाफ तत्काल सख्त कार्रवाई की मांग की गयी।

संपूर्ण क्रांति कार्यकर्ताओं का अगला मित्र-मिलन लोकनायक जयप्रकाश की जयंती के अवसर पर 11 एवं 12 अक्टूबर, 2014 को मुजफ्फरपुर (बिहार) में होगा। संपूर्ण क्रांति राष्ट्रीय मंत्र के संयोजक भवानी शंकर ने इसकी घोषणा मित्र-मिलन सम्मेलन समापन के दिन की। **–महादेव विद्रोही**

भाई आदित्य पटनायक सर्वोदय समाज के संयोजक मनोनित

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष भाई महादेव विद्रोही ने सर्व सेवा संघ के न्यासी तथा अंत्योदय चेतना मंडल, मयूरभंज (उड़ीसा) के संस्थापक भाई आदित्य पटनायक को सर्वोदय समाज का संयोजक मनोनीत किया।

ज्ञातव्य है कि सर्व सेवा संघ की कार्यसमिति ने अपने अध्यक्ष भाई महादेव विद्रोही को सर्वोदय समाज का संयोजक मनोनित करने हेतु अधिकृत किया था।

सर्वोदय समाज गांधी विचार में आस्था रखने वालों का एक राष्ट्रीय मंच है। इसकी स्थापना मार्च 1948 में सेवाग्राम में आयोजित रचनात्मक कार्यकर्ता सम्मेलन में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में हुई थी।

श्री आदित्य भाई इससे पूर्व राष्ट्रीय लोकसमिति की राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति के सदस्य तथा सर्व सेवा संघ-प्रकाशन के संयोजक रह चुके हैं। आप उड़ीसा के आदिवासी क्षेत्र में नेत्र चिकित्सा का बड़ा अस्पताल चलाते हैं। साथ ही आदिवासियों के संगठन तथा कल्याण से संबंधित अनेक गतिविधियों का संचालन कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त आप कई राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं से सक्रिय रूप से जुड़े हुए हैं। सर्वोदय-विचार से लम्बे समय से आप जुड़े रहे हैं।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी की प्रार्थना सभा में उपस्थित साथियों जिनमें प्रकाशन के संयोजक श्री अशोक भारत सहित भाई अशोक मोती, बद्रीनाथ सहाय, तारकेश्वर सिंह, अनूप आचार्य, अतुल आचार्य, महेन्द्र, उमेश, अजय, रामू एवं श्यामू ने भाई आदित्य पटनायक को सर्वोदय समाज के संयोजक मनोनित होने पर प्रसन्नता व्यक्त की तथा उन्हें हार्दिक बधाई दी है।

—मारोती गावंडे/बद्रीनाथ सहाय

भ्रूण-हत्या

भ्रूण-कन्या का क्रंदन

एक दिन गर्भस्थ शिशु यूं बोला ब्रह्माजी से।
सारे नियम बदल दिये प्रभुवर पूछ रहा हूं कैसे।।

संयम से रह कर के मानव यज्ञ हवन करता था।
पाने को संस्कारी शिशु ''यौगिक क्रिया'' करता था।
लेकिन पशुवत बना है नर नहीं सदाचार का ध्यान रखें।
समझाऊं मैं उनको कैसे त्याग रहे हो आज जिन्हें।

होकर के निर्दोष सघन अत्याचार सहन करता हूं।
मेरी मईया मुझे बचा ले रोज रूदन करता हूं।
मात-पिता के खबर बने नहीं फिकर मेरी किंचितभी।
माता वैरीच पिता शत्रु बने मेरे निश्चित ही।

निरि अविकसित कली जो विकसित नहीं होने पाई।
गोली और दवा से भूना फिर हथियारों से कटवाई।
सबके दुष्कर्मों का फल मैं कब तक सहता रहूंगा।
हूं अबोध नन्हा-सा अंकुर कब तक मुर्झाता रहूंगा।

द्वितीय और तृतीय माह में 'खतरा सहता' भारी।
यूं तो पूरे टाईम में भी होती रहती ख्वारी।
अगर रोकना जनसंख्या तो कुछ संयम अपनाओ।
इनको देकर सदबुद्धि मेरे प्रभु मुझे बचाओ।

तभी भ्रूण कन्या एक बोली रोती और बिलखती।
हमारा दुखड़ा कौन सुने? दिन रात सिसकती रही।
चेक किया 'अल्ट्रासाउण्ड' किया तुरंत सफाया।
हमारा रोना और बिलखना नहीं ध्यान में आया।

हमसे ज्यादा तुम बेहतर हो चाहत तुमही सबको।
बैरी दहेज दानव के कारण भूल गए सब हमको।
50 प्रतिशत सूत की आशा में तुमको रुकवाते।
लेकिन 100 प्रतिशत हमको तुरंत साफ करवाते।
जिस दिन हमारा जन्म हुआ न बजी ढोल शहनाई।
लेकिन तुमरे जन्म दिवस पर ढेरों बँट गई मिठाई।

लक्ष्मी समझ पूर्व कन्या का सब करते थे आदर।
आधे हो ज ाते अब बर्तन फट जाते हैं बादर।
यही हाल रहा धरती से लड़की अदृश्य हो जाएगी।
भ्रष्टाचार बढ़ेगा बेहद स्थिति नाजुक हो जाएगी।

लड़के कुँवारे रह जायेंगे लड़की न मिल पाएगी।
पश्चाताप पड़ेगा करना ऐसी नौबत आ जाएगी।
स्थिति समान रखनी है यदि वो 'चैक-अप' बन्द कराओ।
'गांधी' त्यागो भेदभाव को, भ्रष्टाचार मिटाओ।

–कमलेश गांधी, मुरादाबाद

शील-रक्षा खतरे में

हमारे देश के सिनेमा और उसके जो 'पोस्टर' होते हैं, वे इतने घृणित और बीभत्स हैं कि उनके स्मरण से आंखों में आंसू आ जाते हैं! माता-पिता इन चित्रों को कैसे सहन करते हैं? ऐसे पोस्टरों से तो गृहस्थाश्रम की बुनियाद ही उखाड़ी जा रही है। हम यदि गृहस्थाश्रम की प्रतिष्ठा चाहते हैं, तो हमें संयम बढ़ाना होगा, ब्रह्मचर्य को उत्तेजन देना होगा। समाज को संयम-प्रधान बनाना होगा।

इस तरह, आज की परिस्थिति में बहनों के सामने शील-रक्षा का एक बहुत बड़ा कार्य पेश है। संस्कृति और सभ्यता की रक्षा का कार्य बहनों का है। केवल भौतिक उन्नति से देश ऊंचा नहीं उठता। जब शील ऊंचा उठता है, तभी उन्नति करता है। इसलिए मैं बहनों से कहता हूं कि अब देश की शील-रक्षा आपके हाथ में है।

–विनोबा

आबादी घटने के विरुद्ध...

अघोषित उलगुलान

❑ अनुज लुगुन

अल सुबह दांडू का काफिला
रुख करता है शहर की ओर
और सांझ ढले वापस आता है
परिंदों के झुंड-सा,
अजनबीयत लिए शुरू होता है दिन
और कटती है रात
अधूरे सनसनीखेज किस्सों के साथ
कंक्रीट से दबी पगडंडी की तरह
दबी रह जाती है, जीवन की पदचाप
बिलकुल मौन!
वे जो शिकार खेला करते थे निश्चिन्त
जहर-बुझे तीर से/या खेलते थे
रक्त-रंजित होली/अपने स्वत्व की
आँच से/खेलते हैं शहर के
कंक्रीटीय जंगल में/जीवन बचाने का
खेल/शिकारी शिकार बने फिर रहे हैं
शहर में/अघोषित उलगुलान में
लड़ रहे हैं जंगल
लड़ रहे हैं ये
नक्शे में घटते अपने
घनत्व के खिलाफ
जनगणना में घटती
संख्या के खिलाफ/गुफाओं की तरह
टूटती/अपनी ही जिजीविषा के खिलाफ
इनमें भी वही आक्रोशित हैं
जो या तो अभावग्रस्त हैं
या तनावग्रस्त हैं/बाकी तटस्थ हैं
या लूट में शामिल हैं/
मंत्रीजी की तरह
जो आदिवासीयत का राग भूल गये
रेमंड का सूट पहनने के बाद!
कोई नहीं बोलता इनके हालात पर
कोई नहीं बोलता जंगलों के कटने पर
पहाड़ों के टूटने पर/नदियों के सूखने
पर/ट्रेन की पटरी पर पड़ी
तुरिया की लावारिस लाश पर
कोई कुछ नहीं बोलता,
बोलते हैं बोलने वाले
केवल सियासत की गलियों में
आरक्षण के नाम पर/बोलते हैं लोग
केवल/उनके धर्मान्तरण पर/चिन्ता है
उन्हें/उनके 'हिन्दू' या 'ईसाई' हो जाने
की/यह चिन्ता नहीं कि

आदिवासी समाज के सवालों की यह कविता हम सबसे सवाल पूछती है। इनमें महुआ की गंध है, तो पसीने की उपस्थिति भी। बेबसी है तो गुस्सा भी। सिमडेगा के रहने वाले ***अनुज लुगुन*** *को बीते साल भारत भूषण अग्रवाल सम्मान दिया गया था। वह मुंडा समुदाय से हैं। इस समय वह बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में शोधरत हैं। प्रस्तुत है साभार यह कविता।* **–सं.**

रोज कंक्रीट के ओखल में
पिसते हैं उनके तलवे
और लोहे की ढेंकी में
कुटती है उनकी आत्मा
बोलते हैं लोग केवल बोलने के लिए
लड़ रहे हैं आदिवासी
अघोषित उलगुलान में
कट रहे हैं वृक्ष
माफियाओं की कुल्हाड़ी से और
बढ़ रहे हैं कंक्रीटों के जंगल।
दांडू जाये तो कहां जाये/कटते जंगल
में/या बढ़ते जंगल में।
आदिवासी
वे जो सुविधाभोगी हैं
या मौकापरस्त हैं
या जिन्हें आरक्षण चाहिए
कहते हैं हम आदिवासी हैं,
वे जो वोट चाहते हैं
कहते हैं तुम आदिवासी हो,
वे जो धर्म प्रचारक हैं
कहते हैं/तुम आदिवासी जंगली हो।
वे जिनकी मानसिकता यह है
कि हम ही आदि निवासी हैं
कहते हैं तुम वनवासी हो,
और वे जो नंगे पैर
चुपचाप चले जाते हैं जंगली पगडंडियों
में/कभी नहीं कहते कि/हम आदिवासी
हैं/वे जानते हैं जंगली जड़ी-बूटियों से
अपना इलाज करना
वे जानते हैं जंतुओं की हरकतों से
मौसम का मिजाज समझना
सारे पेड़-पौधे, पर्वत-पहाड़
नदी-झरने जानते हैं
कि वे कौन हैं। ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) अशोक भारत (प्रकाशक), सुरभि प्रिन्टर्स, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया वाराणसी से मुद्रित तथा सर्व सेवा संघ-परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001, फोन एवं फैक्स नं. 0542-2440385 से प्रकाशित। संपादक : बिमल कुमार। छपी प्रतियाँ : 1500